भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी-लेनिनवादी) की केन्द्रीय कमेटी का मुखपत्र

प्रतिरोध का स्वर

अक्तूबर 2021

वर्ष 35
संख्या 10

मूल्य 2 रुपये

3 अक्तूबर 2021 : उत्तर प्रदेश के उपमुख्यमंत्री के आगमन पर काले झंडे दिखाने के लिए किसान तिनकोनिया (लखीमपुर खीरी) में जमा हुए। उक्त कार्यक्रम का आयोजन केन्द्र सरकार में गृह राज्यमंत्री अजय मिश्रा ने किया था। विरोध प्रदर्शन के बाद वापस जाते प्रदर्शनकारियों को रौंदती गाड़ी।

किसानों पर इस बर्बर हमले का देशव्यापी विरोध हुआ। किसानों के गुस्से को देखते हुए प्रदेश की आर.एस.एस. -भाजपा सरकार देश के गृह राजयमंत्री के बेटे आशीष मिश्रा समेत कुछ गुनहगारों को गिरफ्तार करने को बाध्य हुई। परंतु इस हमले के मुख्य सूत्राधार, आर.उस.उस. -भाजपा के बाहुबली नेता तथा केन्द्र सरकार में गृह राज्य मंत्री की बर्खासतगी तथा गिरफ्तारी अभी बाकी है जिसके लिए किसान संघर्षरत हैं।

अखिल भारतीय किसान मजदूर सभा (एआईकेएमएस) द्वारा

असम में बड़े पैमाने पर निष्कासन अभियान की निंदा

बिजली कनेक्शन और हाईकोर्ट के स्टे वाले घरों को भी निशाना बनाया

पुलिस के कई राउंड की फायरिंग में दो की मौत व कई गंभीर रुप से घायल

एआईकेएमएस असम के दरांग जिले के ढालपुर में लोगों पर पुलिस फायरिंग की कड़ी निंदा करता है। पुलिस फायरिंग में दो लोगों की मौत हो गई और कई गंभीर रूप से घायल हो गए।

पुलिस ने अतिक्रमण के नाम पर लंबे समय से रह रहे लोगों को बेदखल करने के अभियान के तहत फायरिंग की। इनके पास लंबे समय से यहां रहने के प्रमाण हैं जैसे बिजली के कनेक्शन हैं। ये परिवार काफी लम्बे समय से यहां रह रहे हैं।

ये गरीब परिवार ब्रह्मपुत्र नदी के तटीय क्षेत्रों में रहते थे तथा नदी के कटाव के कारण वहां से विस्थापित हुए थे। इस आंतरिक विस्थापन के बाद इन गरीब लोगों ने सर छिपाने के लिए यहां घर बनाये थे। मौजूदा कोरोना काल में इन परिवारों को अब फिर से विस्थापन तथा लाचारी का सामना करना पड़ रहा है।

सोमवार को पुलिस ने 800 परिवारों को जबरन बेदखल किया जिस दौरान कई राउंड फायरिंग की गई।

आरएसएस भाजपा सरकार बेदखल किए गए लोगों को कोई भी विकल्प प्रदान किए बिना अलोकतांत्रिक और अमानवीय तरीके से इस अभियान को चलाया था। यह अभियान अल्पसंख्यकों से ताल्लुक रखने वाले लोगों को जबरन बेदखल करने के लिए है।

ये सभी परिवार गरीब भूमिहीन हैं तथा दिहाड़ी पर मजदूरी करके गुजारा करते हैं। इनको विस्थापित करने से पूर्व इनका उचित पुनर्वास जरूरी है। जैसी सरकार की घोषणा है कि किसी भूमिहीन को विस्थापित करने से पूर्व जमीन दी जायेगी, उसके अनुसार इनमें से प्रत्येक परिवार को विस्थापन से पहले तीन बीघा जमीन तथा प्रधानमंत्री आवास योजना से घर बनाकर दिया जाए। बिना पुनर्वास के जबरए विस्थापन न केवल अमानवीय है बल्कि न्यायालयों के फैसलों तथा सरकारी घोषणाओं के भी खिलाफ है।

एआईकेएमएस ने मांग की है कि इस बेदखली मुहिम को तुरंत रोका जाए, बेदखल किये गये लोगों की जमीन वैकल्पिक जमीन दिये जाने तक वापस की जाए और लोगों को मारने के लिए पुलिस फायरिंग का आदेश देने वाले पुलिस अधिकारियों पर मुकदमा चलाया जाए।

एआईकेएमएस सभी किसान संगठनों और लोकतांत्रिक ताकतों से अपील करता है कि अवैध ढंग से चलाये गये इस अमानवीय निष्कासन अभियान के विरुद्ध एक सशक्त अभियान चलाया जाए तथा इसके लिए किसानों समेत व्यापक जनमा को गोलबंद किया जाए।

(एआईकेएमएस की केन्दीय कार्यकारिणी द्वारा 23 सितम्बर 2021 को जारी वक्तव्य)

सीपीआई (एमएल)– न्यू डेमोक्रेसी की केंद्रीय समिति का बयान

सीमावर्ती राज्यों में बीएसएफ के क्षेत्राधिकार में वृद्धि को वापस लो

गृह मंत्रालय ने 15 अक्टूबर 2021 को अंतर्राष्ट्रीय सीमाओं पर सीमा सुरक्षा बल बीएसएफ के अधिकार क्षेत्र को 15 किलोमीटर से बढ़ाकर 50 किलोमीटर करने के लिए 2014 की एक पूर्व अधिसूचना की अनुसूची में संशोधन किया है जबकि मणिपुर, मिजोरम, त्रिपुरा, नागालैंड, मेघालय, जम्मू कश्मीर और लद्दाख के पूरे क्षेत्र पहले से ही बीएसएफ के अधिकार क्षेत्र में हैं। यह संशोधन पंजाब, पश्चिम बंगाल और असम में बीएसएफ के अधिकार क्षेत्र को काफी हद तक बढ़ा देता है क्योंकि राजस्थान और गुजरात में ऐसे क्षेत्र पहले से ही थे जो बीएसएफ के अधिकार क्षेत्र में हैं। यह पंजाब के लगभग आधे हिस्से और पश्चिम बंगाल के आधे से अधिक क्षेत्र को बीएसएफ के अधिकार क्षेत्र में लाता है।

केंद्र सरकार का यह फैसला राज्यों के अधिकारों पर एक क्रूर हमला है। यह देश के अर्ध संघीय संविधान के तहत भी राज्यों के अधिकारों को कम करता है। यह सत्तारूढ़ फासीवादी ताकतों द्वारा केंद्र सरकार के हाथों में सत्ता को और अधिक केंद्रीकृत कर देने का एक प्रयास है। ऐसी स्थिति में केंद्रीय बलों की पहुंच बढ़ाने के लिए यह उनके फासीवादी डिजाइन का हिस्सा है, जहां देश के बड़े हिस्से राज्य सरकारों के माध्यम से उनके शासन में नहीं है। यह उन परिस्थितियों में राज्य के सैन्यीकरण को बढ़ाने का भी प्रयास है जहां केंद्र सरकार कानून को और अधिक कठोर बना रही है और दमन के हथियारों को और तेज कर रही है।

यह फासीवादी शासकों द्वारा संघवाद पर अपने हमलों के लिए राष्ट्रीय सुरक्षा के मुद्दों को केंद्र में लाने का एक प्रयास भी है। इसके अलावा यह लोगों को संघर्ष के उन मुद्दों से हटाने का भी प्रयास है जो वे सरकार के खिलाफ अपने अधिकारों की रक्षा में कर रहे हैं। देश में चल रहा मौजूदा किसान संघर्ष जिसमें पंजाब के किसानों की बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका है। विदेशी और घरेलू कारपोरेट की सेवा में लोगों का ध्यान भटकाने के लिए केंद्र सरकार को और अधिक हथियार देने का भी प्रयास है। केंद्र सरकार 'डायवर्ट एंड सप्रेस' की रणनीति का सहारा ले रही है।

यह कदम ऐसे समय में उठाया गया है जब जम्मू–कश्मीर में संकट और गहरा गया है। अनुच्छेद 370 की समाप्ति, अनुच्छेद 35–ए को रद्द करने और जम्मू–कश्मीर राज्य को 2 केंद्र शासित प्रदेशों में विभाजित करने जैसे फासीवादी उपायों ने उस राज्य में पहले से ही संकटग्रस्त स्थिति को और खराब कर दिया है। यह कदम जम्मू–कश्मीर सहित अन्य मामलों में सरकार की विफलताओं एवं कारपोरेट की सेवा में पर्यावरण नियमों, वन संरक्षण कानूनों में बदलाव के अलावा तीन काले कृषि कानूनों और 4 लेबर कोड को छुपाने के लिए उठाया गया है।

यह कदम संविधान में एक निहित सीमा तक संघवाद पर एक और प्रहार करता है। यह लोगों पर फासीवादी शासकों के हमले का हिस्सा है और इस हमले का विरोध होना चाहिए।

सीपीआई (एमएल)– न्यू डेमोक्रेसी की केंद्रीय समिति बीएसएफ के अधिकार क्षेत्र के विस्तार की कड़ी निंदा करती है और मांग करती है कि इसे तुरंत और पूरी तरह से वापस लिया जाना चाहिए।

मुद्रीकरण के नाम पर सरकारी संपत्ति की बिक्री का विरोध

नरेंद्र मोदी के नेतृत्व वाली आरएसएस–भाजपा सरकार ने सड़क, रेलवे स्टेशनों, गैस पाइपलाइन एवं वेयरहाउसिंग जैसी जन सुविधाओं और आधारभूत संरचना वाली सार्वजनिक क्षेत्र की संपत्तियों को मुद्रीकृत करने की घोषणा की है। इस योजना में सरकार के स्वामित्व वाली संपत्तियों को पट्टे पर लंबी अवधि मसलन 25 वर्ष की लीज पर सौंपा जाना है। सरकार द्वारा घोषित मुद्रीकृत योजना के तहत 3 वर्षों में अर्थात मोदी सरकार के शेष बचे कार्यकाल में लाखों करोड़ रुपए की सार्वजनिक क्षेत्र की संपत्तियों को पट्टे की आड़ में निजी क्षेत्र को सौंप कर 6 लाख करोड़ रूपया जुटाना है। इसके तहत सड़क से 1.6 लाख करोड़ रूपये, रेलवे संपत्तियों से 1.52 लाख करोड़ रूपये, बिजली वितरण लाइनों से 45.2 हजार करोड़ रूपये, प्राकृतिक गैस की संपत्तियों से 29.38 लाख करोड़ रूपये और दूरसंचार परियोजनाओं से 35.1 हजार करोड़ रूपये जुटाने का लक्ष्य है।

सरकार का दावा है कि यह सार्वजनिक क्षेत्र की संपत्तियों की बिक्री नहीं, बल्कि उन्हें सिर्फ किराए पर देना है, जिसे सरकार जब चाहेगी वापस ले लेगी लेकिन यह संपत्तियों को 25 साल के किराए के मूल्य पर बेचने की महज एक चाल है। निजी क्षेत्र से संपत्तियां वापस लेने का फैसला सरकार करेगी, लेकिन एक बार कारपोरेट उन संपत्तियों पर स्थाई निर्माण या दूसरे को लीज पर दे देगा तो क्या उसे दोबारा पाना मुमकिन होगा ? अर्थात रेलवे कालोनियों, अस्पतालों, स्कूलों, और जमीनों पर रियल स्टेट का कारोबार अथवा कोई व्यवसाय खड़ा हो जाने के बाद आबंटित लोगों से घर, दुकान, बाजार या माल वापस लेना मुमकिन होगा ? इसलिए यह साफ है कि मुद्रीकृत योजना के तहत पट्टे पर दी जाने वाली सरकारी संपत्तियां स्थाई तौर पर निजी क्षेत्र के हाथों में चली जाएंगी।

वित्त मंत्री कारपोरेट नियंत्रित मीडिया द्वारा लोगों को धोखा देने के लिए बहुत सारे दावे कर रही हैं। 25 वर्षों के बाद इन संपत्तियों को सरकार द्वारा भुगतान के साथ निजी हाथों में जारी रखने के लिए मजबूर किया जाएगा। इससे सार्वजनिक उपक्रमों में काम करने वाले श्रमिकों, योजनाओं से लाभ पाने वाली जनता पर और अधिक आर्थिक हमले और लूट शुरू होगी। इससे शासक वर्गों के साथ लोगों को निरंतर बेरहमी से लूटा और ठगा जाना सुनिश्चित हो जाएगा।

यह योजना मोदी सरकार की सबसे बड़ी ठगी में से एक है जो सरकार बेशर्मी से जनता के पैसे से बनी संपत्तियों और इन संपत्तियों के निर्माण में लोगों के खून पसीने की मेहनत और बुनियादी ढांचे के विकास के नाम पर मामूली कीमत अथवा मुफ्त में ली गई जमीनों को औने–पौने दाम पर निजी क्षेत्र को बेच रही है। ताकि देश की जनता को लूट कर कारपोरेट अपनी तिजोरी भर सकें।

सार्वजनिक क्षेत्र की संपत्तियों के मुद्रीकरण की योजना अर्थव्यवस्था के उस गंभीर संकट को दर्शाती है जो आरएसएस–भाजपा शासन काल में और गहराया है। विमुद्रीकरण और जीएसटी से अर्थव्यवस्था को मिले झटकों से जनता की तकलीफें बढ़ी हैं और अर्थव्यवस्था में मंदी गहराई है। सरकार ने इससे निपटने के लिए कर्ज का रास्ता चुना। वह कर्ज अब जीडीपी के 90 प्रतिशत तक पहुंच गया है। अर्थव्यवस्था में गिरती जीडीपी और घटते राजस्व संग्रह के साथ राजकोषीय घाटा जीडीपी के 9.4 प्रतिशत पर पहुंच गया है। यह संकट महामारी के दौरान आम लोगों को राहत देने या अर्थव्यवस्था को सुधारने के लिए किए गए किसी खर्च के कारण नहीं बल्कि कारपोरेट को उदारता के साथ दी गई तमाम तरह की छूट का परिणाम था। लोगों को यह समझना होगा कि सार्वजनिक उपक्रमों की बिक्री से मिलने वाला पैसा शिक्षा, स्वास्थ्य, गरीबी, बेरोजगारी दूर करने के लिए खर्च नहीं होगा, बल्कि इससे सरकार अपनी बैलेंस शीट को ठीक कर कारपोरेट को और लाभ देगी। इस तरह यह पैसा सीधे तौर पर सरकार और कारपोरेट हड़प लेंगे।

सरकार के इस फैसले के निहितार्थ में एक और महत्वपूर्ण बात यह है यह योजना दर्शाती है कि मोदी सरकार कितनी गहराई से कारपोरेट सेवा के लिए प्रतिबद्ध है और इसके लिए वह किसी भी हद तक जा सकती है। राजस्व संग्रह गिरने के बावजूद सरकार कारपोरेट के लिए कर में कटौती करती जा रही है और बिना शर्त वेट्रो टैक्स माफ किया और विभिन्न मदों के तहत कारपोरेट पर कोरोना संकट काल से निपटने के नाम पर उन पर राहतें बरसाईं। बदले में यह कारपोरेट जो बड़ी विदेशी पूंजी से जुड़े हुए हैं और अधिकतम लाभ कमाने के लिए भारत का उपयोग कर रहे हैं। आरएसएस–भाजपा सरकार के दो करीबी कारपोरेट मित्र मुकेश अंबानी और गौतम अडानी ने इस सरकार से अपनी निकटता के चलते विदेशी फर्मों से भी धन प्राप्त किया है। हालांकि ये केवल कुछ उदाहरण हैं। विदेशी धन को बड़ी संख्या में स्टार्टअप्स में डाला जा रहा है। मोदी सरकार आत्मनिर्भरता के नारे को खास तौर पर उछाल रही है, जो राष्ट्रवाद का दिखावा है ताकि साम्राज्यवादी पूंजी पर निर्भरता को छुपाया जा सके।

सरकार ने अप्रत्यक्ष करों में भारी वृद्धि की है जिससे आम लोगों पर बोझ पड़ता है। खास तौर पर पेट्रोलियम पदार्थों डीजल और पेट्रोल पर करों को कीमतों का दो तिहाई तक पहुंचा कर सरकार ने गैर कर राजस्व सकल घरेलू उत्पाद के लगभग एक चौथाई 22.7 प्रतिशत तक नीचे पहुंचा दिया है। कर संग्रह का बड़ा हिस्सा लोगों से निकाले गए अप्रत्यक्ष कर हैं और गैर कर राजस्व का बड़ा हिस्सा सार्वजनिक क्षेत्र की कंपनियों की बिक्री से है। इनका उपयोग कारपोरेट को लाभ देने के लिए किया जा रहा है। बेशर्मी से सरकार देश को तेजी से विदेशी कारपोरेट को सौंप रही है। यही नहीं विदेशी कारपोरेट और उनके दलाल घरेलू कारपोरेट के प्रति सरकार की प्रतिबद्धता इस हद तक है कि उसने उन्हें खेती सौंपने के लिए तीन कृषि कानून बना दिए और 1 वर्ष से किसान इन कृषि विरोधी कानूनों के खिलाफ लड़ रहे हैं।

सार्वजनिक उपक्रमों की खुली और थोक बिक्री का श्रमिक कड़ा विरोध कर रहे हैं। विशाखा स्टील प्लांट इस मामले में एक उदाहरण है। सरकार उन लोगों के साथ विश्वासघात कर रही है जिनकी जमीनें विकास के नाम पर अधिग्रहित की गई थीं और अब उसे कारपोरेट को सौंपा जा रहा है। सांप्रदायिक आधार पर लोगों को बांट कर देश को बेचने की सरकार की इस योजना का पूरी ताकत के साथ विरोध करने के लिए सभी वर्गों के लोगों को आगे आकर इस लड़ाई को तेज करना चाहिए।

पेरु के क्रांतिकारी कम्यूनिस्ट आंदोलन के नेता

कामरेड गोंजालो को श्रद्धांजलि

पेरू के कम्युनिस्ट क्रांतिकारी आंदोलन के नेता अबीमेल गुजमैन को (कामरेड गोंजालो के नाम से लोकप्रिय) उनकी शहादत पर सीपीआई (एमएल) न्यू डेमोक्रेसी ने क्रांतिकारी अभिवादन के साथ श्रद्धांजलि अर्पित की है। गोंजालो की मृत्यु 11 सितंबर 2021 को राजधानी लीमा के पास कैलाओ नौसैनिक अड्डे पर हुई। वह 86 वर्ष के थे।

का. गोंजालो को 12 सितंबर 1992 को गिरफ्तार किया गया था और पिछले 29 वर्षों से अत्यंत कड़ी सुरक्षा वाले जेल में रखा गया था। एक सैन्य अदालत ने उन्हें आजीवन कारावास की सजा सुनाई थी. 2003 में पेरू के संवैधानिक न्यायालय द्वारा इस मुकदमे को असंवैधानिक घोषित किया गया था। 2004 में उनका मुकदमा शुरू हुआ था। वर्ष 2005 में तीसरी बार पुनः मुकदमा चला और उन्हें आजीवन कारावास की सजा सुनाई गई। वर्ष 2018 में उन्हें जेल में एक और आजीवन कारावास की सजा दी गई। पेरू में उनके मुकदमे के संचालन और उन्हें विशेष रूप से बनाई गई जेल में रखने से पता चलता है कि प्रतिक्रियावादी सत्ता इस निडर क्रांतिकारी से कितना डरती थी। उनका मुकदमा और सजा सुनाने का फैसला एक मजाक था। वह पिछले 2 महीनों से गंभीर रूप से बीमार थे लेकिन उन्हें उचित चिकित्सा और उपचार से भी वंचित कर दिया गया था।

कॉमरेड गोंजालो छात्र जीवन के दौरान कम्युनिस्ट आंदोलन की ओर आकर्षित हुए थे। उन्हें मध्य पेरू के एक विश्वविद्यालय में दर्शन शास्त्र के प्रोफेसर के रूप में नियुक्त किया गया था। क्रांतिकारी आंदोलन में अपने शुरुआती दिनों से ही कामरेड गोंजालो ने पेरू में क्रांति की मुख्य शक्ति के रूप में किसानों को पहचाना और आदिवासी लोगों की भाषा सीखी। उन्होंने "महान बहस" और माओ के नेतृत्व वाली चीन की कम्युनिस्ट पार्टी का दृढ़ता से समर्थन किया और पेरू की कम्युनिस्ट पार्टी के उस वर्ग के नेता के रूप में वह उभरे जिसे क्रांतिकारी "शाइनिंग पाथ" कहा जाता है। वह पेरू में मुख्य क्रांतिकारी शक्ति के रूप में किसानों के साथ सशस्त्र क्रांति का दृढ़ अनुयाई बनकर उभरे और मार्क्सवाद–लेनिनवाद–माओत्से तुंग विचारधारा के साथ पूरी दृढ़ता से जुड़े। बाद में उन्होंने नौकरी छोड़ दी और गिरफ्तारी होने तक वह भूमिगत रहे। इस दौरान उन्होंने बुद्धिजीवियों के बीच क्रांतिकारी राजनीतिक आधार बनाया। यह वह दौर था जब विभिन्न देशों में संशोधनवादी और क्रांतिकारी वर्गों के बीच वैचारिक मतभेद बढ़ रहे थे और विभाजन हो रहा था जिसमें खुश्चेव के नेतृत्व में सीपीएसयू के आधुनिक संशोधनवाद के खिलाफ माओ के नेतृत्व में सीपीसी के संघर्ष और उनके बाद आने वालों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस संघर्ष में क्रांतिकारी कम्युनिस्टों को आधुनिक संशोधनवाद को दूर करने और क्रांतिकारी दृष्टिकोण बनाए रखने में मदद की। कई देशों में विशेषतः तीसरी दुनिया के देशों में क्रांतिकारी वर्गों ने खुद को संशोधन वादी नेतृत्व से अलग कर लिया और क्रांतिकारी संघर्षों के लिए आगे बढ़े।

1980 में कामरेड गोंजालो के नेतृत्व में शाइनिंग पाथ ने पेरू राज्य के खिलाफ अपना युद्ध शुरू किया। उनके नेतृत्व में पेरू के विशाल ग्रामीण क्षेत्र जुड़े और राजधानी लीमा सहित शहरी इलाकों के गरीबों में अपनी मजबूत उपस्थिति दर्ज की। इस संघर्ष की महत्वपूर्ण विशेषता यह भी थी कि यह संघर्ष ऐसे समय में शुरू किया गया जब संशोधन वादियों ने चीन में पार्टी और राज्य की सत्ता पर कब्जा कर लिया था और उस देश में पूंजीवाद का निर्माण शुरू कर दिया था। उस समय पीसीसी पर हावी रहे देंग संशोधनवाद से प्रभावित होकर विभिन्न देशों में क्रांतिकारी कम्युनिस्टों के कई वर्गों ने संशोधनवाद को अपनाया। कामरेड गोंजालो ने सीपीसी के संशोधनवादी झुकाव को अस्वीकार कर दिया और देंग संशोधन वाद के वह घोर आलोचक बन गए। पेरू के संघर्ष ने क्रांतिकारी कम्युनिस्टों के नेतृत्व में जारी आंदोलन के दौरान शानदार उदाहरण उपस्थित किए हैं। इन आंदोलनों ने फिर से स्पष्ट कर दिया है कि मार्क्सवाद–लेनिनवाद–माओत्से तुंग विचार द्वारा निर्देशित क्रांतिकारी कम्युनिस्ट ही, कम्युनिस्ट आंदोलन के असली वारिस हैं। माओत्से तुंग विचारधारा मार्क्सवाद–लेनिनवाद का सर्वांगीण विकास है।

कामरेड गोंजालो की कैद में बिना उचित चिकित्सा उपचार के शहीद हो जाना दुनिया भर के कम्युनिस्ट क्रांतिकारियों के लिए उनके समर्पण और बलिदान से प्रेरणा लेने का अवसर है। यह शाइनिंग पाथ के नेतृत्व में क्रांतिकारी युद्ध के अनुभवों को आंकलित करने का भी अवसर है। उसके सकारात्मक और नकारात्मक दोनों ही प्रभावों से सबक लेते हुए यह समय कम्युनिस्ट क्रांतिकारियों के लिए साम्राज्यवाद और प्रतिक्रियावादी शासक वर्गों के खिलाफ अपने संघर्ष को तेज करने का है।

सीपीआई (एमएल) न्यू डेमोक्रेसी–सेंट्रल कमेटी ने कामरेड गोंजालो की शहादत से प्रेरणा लेते हुए भारत में नई जनवादी क्रांति के लिए संघर्ष तेज करने का संकल्प लिया है।

कामरेड गोंजालो को लाल सलाम!

भाजपा सरकारें किसान आंदोलन पर सुनियोजित हमले कर रही हैं

अनिल दुबे

तीन कृषि कानूनों व बिजली कानून को वापस लेने और फसलों की सरकारी खरीद के लिए एमएसपी गारंटी कानून बनाने की मांग को लेकर देश की राजधानी दिल्ली की सीमाओं पर पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, मध्य प्रदेश आदि राज्यों के किसान केंद्र और राज्य सरकारों द्वारा जबरन रोके जाने के कारण बैठे हैं। किसान दिल्ली जाकर नरेंद्र मोदी सरकार से मांग करना चाहते हैं कि संसद से पारित किए गए किसान विरोधी काले कानूनों को समाप्त किया जाए। दिल्ली की सीमाओं पर जबरन रोके जाने के बाद किसानों को धरने पर बैठे हुए अब लगभग एक वर्ष होने जा रहा है। इस दौरान जाड़ा, गर्मी व बरसात से लगभग 700 किसान शहीद हो चुके हैं लेकिन राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ और भारतीय जनता पार्टी की केंद्र और राज्य सरकारों के कानों पर जूं तक नहीं रेंग रही। इसके विपरीत संघ–भाजपा के फासिस्ट गुंडों के किसानों पर सुनियोजित हमले हरियाणा और यूपी में बढ़ रहे हैं। उत्तर प्रदेश के तराई के क्षेत्र लखीमपुर खीरी में उपमुख्यमंत्री केशव प्रसाद मौर्या का कार्यक्रम जिसका आयोजन क्षेत्र के बाहुबली और मोदी सरकार में केंद्रीय गृह राज्य मंत्री अजय मिश्रा उर्फ टेनी ने किया था, उसका शांतिपूर्ण विरोध प्रदर्शन करने के बाद किसानों के जत्थे वापस लौट रहे थे। तभी केंद्रीय मंत्री के बेटे आशीष मिश्रा और भाजपा के गुंडों ने गोली चलाते हुए हूटर बजाती गाड़ियों के काफिले से किसानों को रौंद दिया जिसमें 4 किसान और प्रदर्शन को कवर करने वाले स्थानीय चैनल के एक पत्रकार की मौत हो गई। किसानों को कुचलने के बाद केंद्रीय मंत्री टेनी का पुत्र पुलिस की गाड़ी में भाग गया।

लखीमपुर खीरी में किसानों को गाड़ियों से निर्दयता पूर्वक कुचलने की यह घटना अकस्मात नहीं हुई है। बल्कि संघ–भाजपा की केंद्र में नरेंद्र मोदी और यूपी में योगी आदित्यनाथ सरकार के सत्ता में आने के साथ ही किसानों, मजदूरों, छात्रों, युवाओं, महिलाओं के साथ ही समाज के विभिन्न तबकों के लोकतांत्रिक व शांतिपूर्ण विरोध प्रदर्शनों और अभिव्यक्ति की आजादी पर सुनियोजित हमला करने और उन्हें बदनाम करने का सिलसिला शुरू हुआ है जो एक सोची समझी फासिस्ट शैली का परिणाम है। संघ और भाजपा के इस प्रयोग को सीएए विरोधी आंदोलन के दौरान देश देख चुका है जब दिल्ली में अल्पसंख्यक समुदाय पर एक तरफा हमले किए गये और केंद्रीय गृह मंत्री अमित शाह की दिल्ली पुलिस ने उसे सांप्रदायिक दंगे का नाम दे दिया।

तमाम उतार–चढ़ाव और झंझावातों से गुजरते हुए भारत की सबसे बड़ी आबादी वाले किसानों का यह आंदोलन अब दुनिया के लिए जिज्ञासा और शोध का विषय बनता जा रहा है। देश ही नहीं पूरी दुनिया ने ऐसा शांतिपूर्ण, संगठित और निरंतरता में अपना प्रभाव तथा विस्तार करने वाला किसान आंदोलन नहीं देखा है। 3 कृषि कानूनों को मोदी सरकार कोरोना की पहली लहर के दौरान जून 2020 में अध्यादेश के जरिए लाई और फिर उसे राज्यों की सहमति के बिना और संसदीय नियमों के तहत चर्चा की औपचारिकता पूरी किए बिना संसद के मानसून सत्र में पारित किया था। पंजाब में कीर्ति किसान यूनियन तथा कुछ अन्य किसान संगठनों ने उसी समय से इन काले कृषि कानूनों के खिलाफ आंदोलन छेड़ दिया था। दूसरे किसान संगठन भी आंदोलन में कूद गए। इस तरह संगठन दर संगठन और फिर राज्य दर राज्य आंदोलन फैलता गया जो 26 नवंबर 2020 को दिल्ली मार्च करते हुए राजधानी की सीमाओं पर पहुंच गया। फिर भी आंदोलन को लेकर संघ–भाजपा की केंद्र और राज्य सरकारों ने किसान विरोधी रुख अपनाए रखा। हरियाणा की मनोहर लाल खट्टर सरकार ने किसानों को दिल्ली जाने से रोकने के लिए हाईवे और सड़कें तक खोद डालीं। दिल्ली जाने वाले हाईवे पर बड़ी–बड़ी कीलें गाड़ी गईं व बैरिकेड्स लगाकर हजारों अर्धसैनिक बलों को तैनात कर दिया गया। यूपी की योगी सरकार ने भी कमोबेश यही सब किया।

पंजाब में बड़े किसान आंदोलनों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि रही है और उसी कड़ी में तीन कृषि कानूनों के खिलाफ पहली आवाज पंजाब से उठी। मौजूदा किसान आंदोलन को संघ–भाजपा की मोदी और उसकी राज्य सरकारों ने देश के किसानों की आवाज नहीं माना। यही कारण है कि पंजाब से शुरू हुए आंदोलन को केंद्रीय मंत्री व भाजपा नेता समय–समय पर खालिस्तानियों द्वारा संचालित और पाकिस्तान व चीन समर्थित बताते रहे हैं, लेकिन देश के कृषि प्रधान राज्य हरियाणा, यूपी, एमपी, बिहार, उत्तरांचल, केरल, कर्नाटक, तेलंगाना, महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश, असम और तमिलनाडु आदि राज्यों के किसानों के काफिले आंदोलन के साथ जुड़ते गए। किसान आंदोलन में भारत के अन्य संघर्षशील तबकों द्वारा अपनी मांगों के साथ जुड़ते जाने के कारण उसमें देश व्यापी संघर्ष की संभावनाओं का भी प्रकटीकरण हो रहा है। 27 सितंबर के "भारत बंद" में श्रमिकों, भूमिहीन किसानों, महिलाओं, युवाओं, छात्रों और संगठित क्षेत्र के कर्मचारियों के साथ ही अनेक नागरिक और सामाजिक संगठनों ने भी अपने सवालों के साथ भागीदारी की।

दिल्ली की सीमाओं पर किसान बीते 10 माह से जबरन रोके गए हैं और तब से वह वहीं धरना देकर बैठे हैं जबकि आंदोलन 15 माह से चल रहा है। इस बीच संघ–भाजपा की सरकारों और उसके प्रायोजित गुंडों के हमले लगातार किसान आंदोलनों पर हो रहे हैं लेकिन लखीमपुर खीरी की दिल दहलाने वाली घटना के परिणाम दूरगामी होंगे। एक बर्बर सोच के साथ लखीमपुर में किसानों को गाड़ियों से रौंदकर मारा गया है।

लखीमपुर खीरी में किसानों के हत्याकांड ने किसान आंदोलन के विस्तार और प्रभाव को नई दिशा और ऊंचाइयां दे दी हैं। पश्चिम यूपी के बाद अब उत्तर प्रदेश के अन्य क्षेत्रों सहित देश के अन्य राज्यों में आंदोलन तेजी से नए इलाकों में फैल रहा है। 12 अक्टूबर को लखीमपुर में शहीद किसानों के अंतिम अरदास में जुटे लाखों किसानों का जमावड़ा, दशहरे पर प्रधानमंत्री मोदी, केंद्रीय गृहमंत्री शाह और और तीसरा पुतला यूपी में योगी व हरियाणा में खट्टर के पुतलों का दहन, संयुक्त किसान मोर्चा द्वारा 18 अक्टूबर को देशव्यापी "रेल रोको" और लखनऊ में अब तक की सबसे बड़ी किसान महापंचायत की घोषणा इसका प्रमाण हैं।

लखीमपुर खीरी किसान हत्याकांड ने योगी सरकार को डरा दिया है। इसीलिए खबर आते ही उत्तर प्रदेश सहित देश भर में जैसी प्रतिक्रिया शुरू हुई उसने योगी सरकार को आनन–फानन में किसान नेताओं सहित शहीदों के परिजनों से समझौता करने को मजबूर कर दिया। लखीमपुर खीरी हत्याकांड ने शासक वर्गों के विपक्षी राजनीतिक दलों खासकर कांग्रेस को यूपी विधानसभा चुनाव से पूर्व अपने आपको पुनर्जीवित करने का मौका दिया है। मुख्य संसदीय विपक्षी दल कांग्रेस मोदी सरकार की आर्थिक नीतियों पर सवाल तो उठा रही है लेकिन आर्थिक उदारीकरण का समर्थक बनी हुई है। इसलिए उसका विरोध फिलहाल चुनावी पैंतरे बाजी से अधिक कुछ नहीं है।

कोरोना महामारी के बाद देश में पेट्रोल, डीजल, रसोई गैस, आवश्यक उपभोक्ता वस्तुएं, खाद्यान्नों की बेतहाशा बढ़ रही कीमतें, ठप पड़ गए उद्योग धंधे और बेतहाशा हुई छंटनी व बेरोजगारी और वेतन कटौती ने मजदूर वर्ग के साथ ही मध्यमवर्ग की भी कमर तोड़ दी है। ऐसे घोर आर्थिक संकट के समय में किसान आंदोलन देश की जनता के जले दिलों पर मरहम जैसा काम कर रहा है। यही कारण है कि यह एक ऐसा वक्त है, जब किसान नेताओं के कार्यक्रमों में हजारों लोग जमा हो रहे हैं। एसकेएम ने लखीमपुर खीरी में 12 अक्टूबर को देश के किसानों से वहां पहुंचने, शहीद किसानों की अस्थि कलश यात्रा के लिए यूपी के सभी जिलों और देश के अन्य राज्यों की राजधानियों में निकालने की घोषणा की है। महाराष्ट्र में सत्तारूढ़ अघाड़ी सरकार में शामिल शिवसेना, कांग्रेस व राष्ट्रवादी कांग्रेस ने 11 अक्टूबर को महाराष्ट्र बंद का आयोजन किया। पंजाब, दिल्ली हरियाणा, राजस्थान, मुम्बई और बंगलुरु सहित कई राज्यों, शहरों में बड़े पैमाने पर विरोध प्रदर्शन हुए और मोदी, शाह, योगी व खट्टर के पुतले फूंके गये।

अब किसान आंदोलन ज्यों–ज्यों बढ़ता जाएगा वह सिर्फ तीन कृषि कानूनों की वापसी की मांग तक सीमित नहीं रहेगा। बीते एक वर्ष में किसानों के संघर्ष ने धार्मिक, सामाजिक, भाषाई और सांस्कृतिक विविधता वाले भारत को संघर्ष के रंग में रंगा है और उसे लड़ाई का एक रास्ता दिखाया है। खुद आंदोलन ने भी सीखा है और जनता के विभिन्न तबकों के संघर्षों, संस्कृतियों और सामाजिक अंतर्विरोधों की रंगोलियों को आत्मसात किया है। यह जन आंदोलन के लिए एक बड़ी बात है। इस तरह किसान आंदोलन ने धर्म, जाति व भाषा के भेद को कमजोर किया है। दिल्ली की सीमाओं पर देश के तमाम त्यौहारों और राष्ट्रीय व क्षेत्रीय महानायकों से जुड़े उत्सव बहुरंगी छटा के साथ किसान धरना स्थलों पर दिखाई दे रहे हैं। इस तरह आंदोलन देश की विविधताओं को भी अपने में समेटता जा रहा है, जो संघ–भाजपा के लिए एक बड़ी चुनौती बन गया है। संघ सवर्ण हिंदुत्ववादी फासिस्ट राज व्यवस्था बनाने का सपना पाले हुए हैं और उसे मोदी सरकार के रूप में वह लक्ष्य हासिल होता दिखाई पड़ रहा था, लेकिन किसान आंदोलन ने उसमें बड़ी बाधा डाली है। यहां यह अहम बात यह कि कृषि कानून केवल और केवल कारपोरेट के लाभ के लिए लाया गया है जो किसानों से खेती छीन कर और 135 करोड़ लोगों की खाद्यान्न जरूरतों का सवाल बाजार को सौंप देगा। कारपोरेट को भी किसी संभावित हिंदू राष्ट्र से कोई समस्या नहीं है जब तक कि उसके हित सधते रहें। यही कारण है कि आंदोलन पर सरकारी तंत्र, संघ–भाजपा और कारपोरेट पोषित मीडिया के हमले तेज हुये हैं। आंदोलनकारियों के खिलाफ जनमानस बनाने और जनता को किसानों के खिलाफ भड़काने में कारपोरेट मीडिया लगातार सक्रिय है।

किसान आंदोलन खेती बचाने के सवाल के साथ–साथ आने वाले समय में देश के प्रमुख सवालों से दो–चार होने वाला है। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के काल्पनिक सोच वाला "हिंदुस्तान" बनाने की सोच के खिलाफ लड़ाई तेज हो गई है। संघ सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक व्यवस्था को वर्ण–व्यवस्था वाले राष्ट्र शासन के रूप में विकसित करना चाहता है। संघ–भाजपा की भारत की उक्त अवधारणा के राज व्यवस्था वाले "हिंदू राष्ट्र" के रूप में बदल देने के लिए मौजूदा संविधान में आम जनता को मिले न्यूनतम अधिकारों को सुनिश्चित कराने वाले लोकतांत्रिक संस्थाओं को भी संघ–भाजपा की मोदी सरकार नष्ट कर रही है। ऐसे में उसके खिलाफ लड़ाई की शुरुआत हो गयी है। पश्चिम यूपी में किसानों की एकता को संघ–भाजपा नहीं तोड़ पा रहा है। ऐसे में उत्तराखंड और यूपी के तराई इलाकों में वह सिक्खों को निशाना बनाना चाह रही थी जो कामयाब नहीं हो सका। लखीमपुर यूपी का ऐसा इलाका है जहां विभाजन के बाद पाकिस्तान से भारत आए सिख किसानों की आबादी को बसाया गया था। तब तराई के जंगलों और दलदली इलाकों में जाट सिख किसानों ने उसे आबाद कर खेती योग्य बनाया जिससे वहां प्रदेश के अन्य इलाकों की तुलना में संपन्नता आई है।

संघ–भाजपा के लोग सिखों के खिलाफ स्थानीय लोगों को भड़काने और किसान आंदोलन में फूट डालने के लिए सक्रिय हैं जिसका नेतृत्व यूपी में केंद्रीय गृह राज्य मंत्री टेनी कर रहा है। आंदोलन में तराई के सिख बड़ी संख्या में गाजीपुर बॉर्डर पर शामिल होते रहे हैं। यही कारण है कि भाजपा सरकार आंदोलन को खालिस्तान से जोड़ने की कोशिश कर रही थी, लेकिन इसमें उसे सफलता नहीं मिली। ज्ञात हो कि 2013 में मुजफ्फरनगर व पश्चिम यूपी के अन्य जिलों में अल्पसंख्यक मुसलमानों के खिलाफ हिंदुत्ववादी संगठनों ने सुनियोजित हमले कराए थे और जिसे सांप्रदायिक हिंसा बताया गया था। उस समय किसानों में मतभेद पैदा कर भाजपा ने वोट की अच्छी फसल काटी थी लेकिन

(शेष पृष्ठ 6 पर)

अफगानिस्तान से अमेरिकी साम्राज्यवाद की

अफगानिस्तान में अमेरिकी साम्राज्यवाद की हार अंतरराष्ट्रीय परिस्थितियों में एक निर्णायक मोड़ है जिसका साम्राज्यवादी ताकतों के बीच अंतर्विरोधों पर प्रभाव पड़ने के साथ ही दुनिया पर इसका व्यापक असर दिखाई देगा। साम्राज्यवादी देशों के अंतर्विरोध इससे और तीखे होंगे, जबकि साम्राज्यवाद तथा उत्पीड़ित राष्ट्रों के बीच और विकसित पूंजीवादी देशों में श्रम व पूंजी के बीच टकराव और तीखे होंगे। यह तेजी कई रुपों में सामने आ रही है।

अमेरिकी साम्राज्यवाद की पराजय ऐसे समय में हुई है, जब न केवल सामरिक व आर्थिक दृष्टि से बल्कि तात्कालिक अर्थों में भी उसका ह्रास हुआ है। वह दुनिया के कई क्षेत्रों में पहले से ही टकराव और संघर्ष में फंसा है तथा अनेक बाधाओं का सामना कर रहा है। यह एक प्रभुत्ववादी अतिमहाशक्ति का ह्रास है जिसे एक तरफ तो अपने प्रतिद्वंदियों से चुनौती मिल रही है दूसरी ओर आर्थिक ताकत के मुकाबले सैन्य खर्च का बढ़ता भारी भरकम बोझ उसे पतन के रास्ते पर ले जा रहा है जैसा कि एक और अतिमहाशक्ति तत्कालीन सोवियत संघ के साथ हुआ था।

अफगानिस्तान पर अमेरिकी सैनिक कब्जा दुनिया के सभी क्षेत्रों, संसाधनों के प्रमुख क्षेत्रों और व्यापार मार्गों को नियंत्रित कर किसी भी प्रतिद्वंदी के उदय को नियंत्रित करने के लिए उसके विश्व प्रभुत्व के अभियान का हिस्सा था; अपने विश्व आधिपत्य को सुरक्षित रखने और बनाए रखने के लिए एक आर्थिक रूप से गिरती महाशक्ति का एक प्रयास था। उसके आर्थिक पतन का संबंध इजारेदार पूंजीवाद के अपने मुनाफे को अधिकतम करने और अपेक्षाकृत कठोर श्रम के कार्यों को तीसरी दुनिया के देशों में स्थानांतरित करने के लालच से भी संबधित था। इसका वास्तविक कारण अपने देश में अपेक्षाकृत अधिक मजदूरी और दूसरे देशों में सस्ते श्रम शक्ति की उपलब्धता एंव उत्पादन को दूसरे देशों में स्थानांतरित करके विश्व बाजारों को नियंत्रित करना था। यह बदलाव डब्ल्यूटीओ द्वारा शुरू पूंजी का वैश्विक पुनर्गठन जिसने विभिन्न देशों और क्षेत्रों में उत्पादन के विभिन्न हिस्सों को केंद्रित किया। इसके परिणाम स्वरूप वैश्विक मूल्य श्रृंखला में भाग लेने वाले देशों ने उत्पन्न अधिशेष मूल्य के कुछ हिस्सों को अर्जित किया। इनमें से कुछ देशों में अधिशेष मूल्य के संचय ने उत्पादन के अन्य क्षेत्रों में निवेश को बढ़ावा दिया जिससे उच्च प्रौद्योगिकी वस्तुओं और सेवाओं के लिए अमेरिका और अन्य विकसित साम्राज्यवादी देशों पर निर्भरता कम हो गई जिससे उनका बाजार हिस्सा कम हो गया जबकि अमेरिका और अन्य देशों के इजारेदार समूह ने भारी मुनाफा कमाया और इन कंपनियों के मुनाफे का एक बड़ा हिस्सा विदेशों में उत्पादन केंद्रों और बाजारों से आया। साथ ही अच्छे वेतन वाली नौकरियों की कुल संख्या में गिरावट आई। परिणामस्वरूप सामाजिक व्यय में वृद्धि हुई। इसके साथ–साथ बढ़ते सैन्य खर्च को कर्ज के बुलबुले वाली अर्थव्यवस्था के माध्यम से बनाए रखने की कोशिश की गई, लेकिन गुब्बारे के फटने से 2008 के बाद से विश्व वित्तीय आर्थिक संकट का विस्फोट हुआ। युद्धों की विफलता और 2008 के बाद से गहराते आर्थिक संकट ने बहुध्रुवीय दुनिया का उदय किया है जिसका विस्तार से विश्लेषण किया गया है।

अफगानिस्तान इतिहास में साम्राज्यों के कब्रिस्तान के रूप में जाना जाता है और यहां की हार ने ऐतिहासिक रूप से आक्रमणकारी साम्राज्यों को धराशाई किया है या कम से कम उन्हें अपने लक्ष्यों को पुनर्निधारित करने को बाध्य किश है। यह अमेरिकी साम्राज्यवाद पर भी लागू होगा। इसलिए अफगानिस्तान में हार का असर सिर्फ अफगानिस्तान तक सीमित नहीं रहेगा। इस हार के कारण विदेशों में सैन्य अभियानों के लिए अमेरिका में समर्थन और भी कम होगा। हालाँकि इसके परिणामस्वरूप आर्थिक प्रतिबंधों का और भी अधिक सहारा लिया जा सकता है। अमेरिकी विश्व प्रभुत्व अभियान ने शंघाई समूह (एससीओ) को समेकित किया था, विशेष रूप से चीन और रूस को करीब लाया है, जो एक बड़ी शक्ति है। अफगानिस्तान से सैन्य वापसी ने प्रतिक्रियावादी शासकों के लिए अमेरिका की विश्वसनीयता पर भी सवालिया निशान लगा दिया है। इस नए आधार पर अंतर–साम्राज्यवादी अंतर्विरोधों का तीव्र होना तय है।

अफगानिस्तान के संसाधनों का दोहन करने में सक्षम क्षेत्र की एकमात्र महाशक्ति होने के कारण चीन मुख्य लाभार्थी होगा। दुर्लभ धातुओं और प्राकृतिक गैस के बड़े संसाधनों के दोहन के लिए चीन यहां और अधिक निवेश कर सकता है। इन संसाधनों का मूल्य एक ट्रिलियन अमेरिकी डॉलर होने का अनुमान है। अफगानिस्तान रूस और चीन से जुड़े देशों से घिरा हुआ है जो चीन के 'बेल्ट एंड रोड इनिशिएटिव' का हिस्सा हैं। अफगानिस्तान इस नए 'सिल्क रोड' का एक महत्वपूर्ण हिस्सा होगा क्योंकि यह पुराने सिल्क रास्ते पर भी था। चीन और तालिबान ने अफगानिस्तान में चीनी निवेश पर चर्चा की है। इसलिए पश्चिमी देशों के लिए आर्थिक प्रतिबंधों का खतरा उल्टा होगा।

दक्षिण पूर्व एशिया के देश भी चीन के खिलाफ अमेरिका के उकसाने पर कार्रवाई करने के प्रति सतर्क रहेंगे। यहां तक कि जापान, जो अमेरिकी साम्राज्यवाद की कंटेन चाइना नीति का प्रबल समर्थक और भागीदार रहा है, ने भी इस रुख को कमजोर करने वाले बयान जारी किए हैं। यूरोप में, अमेरिकी सहयोगी रूस के प्रति अपनी शत्रुतापूर्ण रवैये का पुनर्निधारण करेंगे, जो अफगानिस्तान के विकास का एक और बड़ा लाभार्थी है। जहां अफगान लोगों की विदेशी कब्जे वाली शक्ति के खिलाफ लड़ने और बलिदान करने की इच्छा तालिबान की जीत में मुख्य कारक थी (वे अमेरिकी साम्राज्यवाद के खिलाफ लड़ने वाली एकमात्र ताकत थीं), अंतर–साम्राज्यवादी अंतर्विरोधों ने भी इसमें अपनी भूमिका निभाई, और विशेष रूप से तालिबान को एक वैध राजनीतिक शक्ति के रूप में पुनर्वास के लिये विश्व मंचों पर बल दिया। पाकिस्तान के साथ चीन की निकटता और भारत के साथ अमेरिका की बढ़ती निकटता पर पाकिस्तान की आशंका ने भी एससीओ शक्तियों को अफगानिस्तान में विकास को प्रभावित करने में मदद की।

अफगानिस्तान में हार के बाद अमेरिका की अंतरराष्ट्रीय भूमिका का मध्य–पूर्व पर बड़ा प्रभाव पड़ेगा। तुर्की अपने प्रभाव का विस्तार करने की कोशिश करेगा। इसका अरब शाहों द्वारा विरोध किया जाएगा। वे इजराइल के और भी करीब आयेंगे तथा ईरान के साथ अपने संघर्ष को भी कम कर देंगे। अरब शासकों और सैन्य तानाशाहों ने अपने विरोध के केंद्र को ईरान से तुर्की में स्थानांतरित कर दिया है। अमेरिका की हार से रूस और चीन के लिए मध्य–पूर्व में अपना प्रभाव बढ़ाने के अवसर बढ़ेंगे। जहां रूस की सेना सीरिया में तैनात है, वहीं मिस्र के सैन्य शासकों के साथ भी उसके घनिष्ठ संबंध हैं। चीन ने ईरान के साथ 400 अरब अमेरिकी डॉलर का बड़ा आर्थिक समझौता किया है, वह सऊदी अरब समेत मध्य–पूर्व से कच्चे तेल का सबसे बड़ा खरीदार है। इस क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण प्रभाव देखा जा सकता है कि इजरायल की आक्रामक हरकतें अनुपातहीन नहीं होंगी। जबकि इजरायल और अरब शाह दोनों फिलिस्तीनियों के प्रति शत्रुतापूर्ण बने हुए हैं, उनके संघर्षों को अमेरिका में अरब जनता और लोकतांत्रिक जनमत से व्यापक समर्थन मिलेगा। इसलिए, अमेरिका और इजराइल के साथ–साथ अरब शाह हमास के बढ़ते प्रभाव का मुकाबला करने के लिए अब्बास के नेतृत्व वाले फिलिस्तीनी प्राधिकरण (पीए) को मजबूत करने के लिए आगे आयेंगे।

अफ्रीका साम्राज्यवादी शक्तियों के बीच विवाद के मुख्य क्षेत्र में से एक के रूप में उभरा है और संसाधनों और निवेश के क्षेत्रों के लिए हाथापाई महाद्वीप में तेज हो रही है। अफ्रीका में कई हॉटस्पॉट हैं जहां युद्ध सक्रिय रूप से चल रहे हैं। साम्राज्यवादी ताकतें कबीलाई और धार्मिक मतभेदों का इस्तेमाल युद्धों को भड़काने और उकसाने के लिए कर रही हैं। तथाकथित ''आतंक के खिलाफ युद्ध'' का केंद्र अफ्रीका में जाने के लिए तैयार है क्योंकि यह युद्ध अघोषित युद्धों का दूसरा नाम है। अफ्रीकी देशों में साम्राज्यवादी शक्तियों का आर्थिक निवेश और सैन्य तैनाती बढ़ रही है। अमेरिका, चीन, फ्रांस, ब्रिटेन और रूस इस महाद्वीप में प्रभाव के मुख्य दावेदार हैं।

अमेरिकी साम्राज्यवाद की हार से लैटिन अमेरिकी देशों में उन ताकतों को और बढ़ावा मिलेगा जो अपने देशों में नव–उदारवाद व अमेरिकी साम्राज्यवाद समर्थक अभिजात वर्ग के वर्चस्व के खिलाफ लड़ रहे हैं। ये वर्ग क्रांतिकारी कम्युनिस्ट नहीं हैं, लेकिन आय के पुनर्वितरण पर आधारित सुधारवादी एजेंडे को लागू करना चाहते हैं। विशेष रूप से वे प्राकृतिक संसाधनों से आय के सामाजिक क्षेत्रों पर खर्च बढ़ाने के पक्ष में हैं। अमेरिकी साम्राज्यवाद ऐसी सरकारों को उखाड़ फेंकने की साजिश करता रहता है और अमेरिकी समर्थक अभिजात वर्ग की मदद करने के अलावा आर्थिक व सामरिक प्रतिबंध लगाता है। यह होंडुरास और परागवे में सफल रहा है जहां हाल ही में अमेरिकी समर्थक शक्तियां सत्ता में आई हैं। वेनेजुएला में अमेरिका की मादुरो सरकार गिराने की साजिश विफल रही। अमेरिका ने 2018 में निकारागुआ में एफएसएलएन (ओर्टेगा) सरकार के खिलाफ तख्तापलट की साजिश रची थी। इसमें भी वह विफल रहा। बोलिविया में मूवमेंट टु सोशलिज्म (एमएएस) के इवो मोरालेस को सत्ता से हटा दिया गया था लेकिन हाल के चुनावों में एमएएस सत्ता में वापस आ गया। ब्राजील में अमेरिका समर्थक बोल्सोनारो तेजी से अलग–थलग पड़ रहा है। चिली में संविधान सभा के चुनावों में बड़ी संख्या में सुधार समर्थकों की जीत हुई। पेरू में भी कैस्टिलो को खनन संसाधनों, स्वास्थ्य और शिक्षा के अधिकार, भोजन और आवास से सामाजिक खर्च बढ़ाने के कार्यक्रम के साथ राष्ट्रपति चुना गया है। मेक्सिको में भी राष्ट्रपति अमेरिका समर्थक नहीं है, हालांकि उसने अमेरिका के साथ टकराव से परहेज किया है। विशेष महत्वपूर्ण बात यह है कि महाद्वीप में अमेरिकी साम्राज्यवाद के सबसे मजबूत समर्थक कोलंबिया में तीखे संघर्ष हुए हैं। ये विरोध बढ़ती गरीबी और असमानता के खिलाफ केंद्रित हैं। अफगानिस्तान में अमरीकी साम्राज्यवाद की हार लतीनी अमेरिकी देशों में अमरीकी साम्राज्यवाद और उसके समर्थक अभिजात्य वर्ग के खिलाफ लड़ने वाली ताकतों को प्रोत्साहित करेगी।

यूरोप में अमेरिकी साम्राज्यवाद की स्थिति और कमजोर होगी और ब्रिटेन का अलगाव बढ़ेगा। यूरोपीय संघ द्वारा अमेरिकी साम्राज्यवादी हितों से स्वतंत्र मार्ग अपनाने की प्रवृत्ति और मजबूत होगी। रूस और चीन के साथ संबंधों को केवल अमेरिकी चश्मे से नहीं देखने की प्रवृत्ति बढ़ सकता है। राष्ट्रपति बनने के अपने अभियान के दौरान बाइडेन द्वारा रूस को मुख्य दुश्मन करार देने के बावजूद, उन्हें अपनी बयानबाजी को कम करने और चीन को चुनौती देने पर ध्यान केंद्रित किया है। यूरोप, मध्य–पूर्व और मध्य एशिया में रूस पर दबाव कम होगा।

अफगानिस्तान से अमेरिका की वापसी का एक महत्वपूर्ण प्रभाव संयुक्त राज्य अमेरिका में आंतरिक अंतर्विरोधों का तीव्र होना होगा। श्रम और पूंजी के बीच विशेष रूप से कॉरपोरेट के खिलाफ विरोध और सामाजिक व्यय में वृद्धि और घरेलू निवेश के लिए बढ़ रही मांग तेज होगी। नस्लीय न्याय के लिए संघर्ष और श्वेत वर्चस्ववादियों के खिलाफ आंदोलन तेज होगा। डेमोक्रेटिक पार्टी में प्रगतिशील कहे जाने वाला हिस्सा मजबूत हो सकता है और फिलिस्तीनियों के संघर्ष जैसे लोकतांत्रिक संघर्षों का समर्थन बढ़ेगा जबकि सशस्त्र हस्तक्षेप के समर्थन में

पराजय व पलायन तथा दुनिया पर इसका असर

गिरावट आएगी।

भारत सरकार ने इस मुद्दे पर खुद को एक कोने में समेट लिया है। भारत सरकार ने अफगानिस्तान पर अमेरिकी कब्जे का समर्थन किया था और वहां से अमेरिका की सैन्य वापसी का विरोध किया था। देश के शासक वर्गों के मुख्य दलों ने अमेरिकी आक्रमण का समर्थन किया था और सुरक्षा परिषद ने अफगानिस्तान पर कब्जे को मंजूरी दी थी। आरएसएस–ने भारतीय सरकार को अलग–थलग कर दिया है और पूरे क्षेत्र से काट दिया है। अफगानिस्तान और इस क्षेत्र में अपने प्रभाव के लिए पाकिस्तान पर अमेरिकी साम्राज्यवाद की बढ़ती निर्भरता के साथ भारत पर अमेरिकी दबाव होगा कि वह पाकिस्तान के साथ अपने संघर्ष को न बढ़ाए। अमेरिका की वापसी और इसीलिए विश्वसनीय सैन्य भागीदार के रूप में इसकी कम विश्वसनीयता भी भारत अल्पसंख्यकों के अधिकारों और लोगों के लोकतांत्रिक अधिकारों पर हमलों के खिलाफ भी आगाह किया। हम ऐसे हमलों के खिलाफ अफगान लोगों के संघर्ष का समर्थन करते हैं। लेकिन कुछ संगठन–सुधारवादी वामपंथी, गैर सरकारी संगठन और बुद्धिजीवियों का एक तबका बाद वाले को मुख्य पहलू के रूप में लेते हैं और विदेशी कब्जे के खिलाफ अफगान लोगों के संघर्ष की उपेक्षा करते हैं। यह

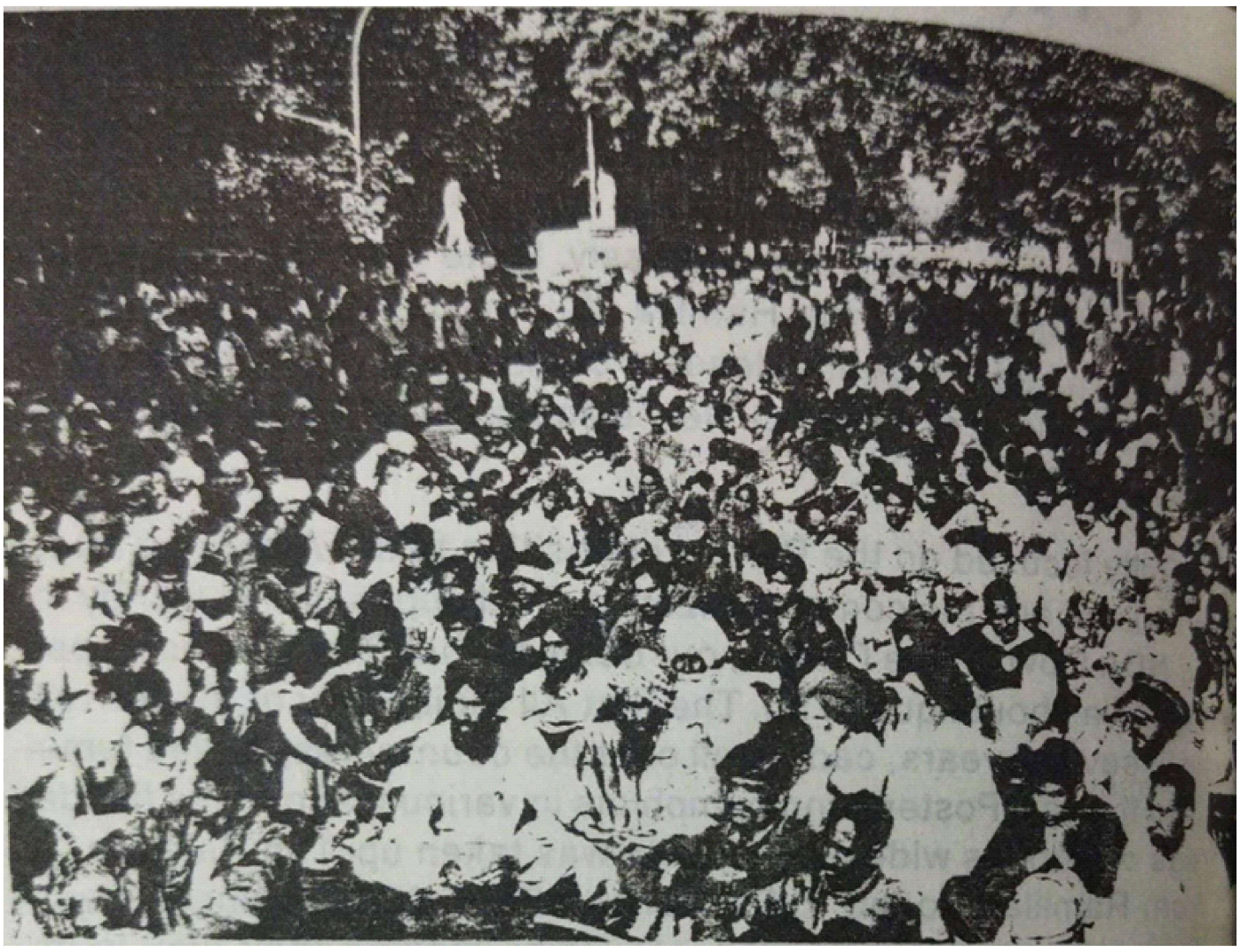

7 अक्तूबर 2001 को अमेरिका के नेतृत्व में पश्चिमी साम्राज्यवादी ताकतों ने अफगानिस्तान पर सैन्य आक्रमण किया था। सैन्य कब्जे की शरुआत हवाई हमले से की गई थी। भारत के शासक वर्गों के अधिकांश दलों ने इस अमेरिकी हमले का समर्थन किया था। इस हमले के खिलाफ सी.पी.आई. (एम-एल)-न्यू डेमोक्रेसी ने इस हमले का पुरजोर विरोध किया था। इस हमले के खिलाफ दिल्ली में एक विशाल प्रदर्शन किया था। यह प्रदर्शन 29 नवम्बर 2001 को किया गया था तथा इसमें 20,000 से अधिक लोगों ने भाग लिया था। प्रदर्शनकारी रामलीला मैदान मे जमा हुए थे जहां से एक रैली निकाली गई थी। अफगानिस्तान पर अमेरिकी सैन्य हमले के खिलाफ किसी राजनीतिक पार्टी द्वारा देश की राजधानी दिल्ली में किया गया यह एकमात्र जन प्रदर्शन था। उक्त प्रदर्शन के बाद हुई सभा के एक हिस्से की छवि पुनः प्रकाशित की जा रह है।

बीजेपी सरकार इस क्षेत्र में परिवर्तन की हवाओं को नजरअंदाज करती रही है और मजबूती से अमेरिकी साम्राज्यवाद का दामन पकड़े हुए है। इसने इसे एससीओ शक्तियों के साथ टकराव में लाया और विशेष रूप से रूस का विश्वास खो दिया। अमेरिकी साम्राज्यवाद के इशारे पर सीरिया और ईरान के खिलाफ रवैया अपनाते हुए भारत सरकार ने इस क्षेत्र में खुद को अलग कर अमेरिका समर्थक रुख अपनाया है। अमेरिका के नेतृत्व में सैन्य कब्जे के खिलाफ अफगानिस्तान के लोगों के संघर्ष का सांप्रदायिक दृष्टिकोण से भी विरोध किया है और इसे पाकिस्तान विरोधी दृष्टिकोण से देखा है। अफगानिस्तान से अमेरिकी सैन्य वापसी सरकार को मजबूर कर सकती है कि वह चीन के साथ सीमा गतिरोध पर अपने रुख की फिर से जांच करे।

मोदी सरकार द्वारा आयोजित सर्वदलीय बैठक में केंद्र सरकार का समर्थन करते हुए शासक वर्गों के दलों ने अफगानिस्तान पर विशेष रूप से रूस से मनमुटाव पर भारत के अलगाव पर भी सवाल उठाया।

अफगानिस्तान के घटनाक्रम पर, एनडी ने एक टिप्पणी और एक बयान प्रकाशित किया है। हमने साम्राज्यवादी ताकतों के खिलाफ अफगान लोगों की जीत की सराहना की। हमने तालिबान के सामाजिक प्रतिक्रियावादी चरित्र तथा महिलाओं के अधिकारों, धार्मिक अल्पसंख्यकों सहित आश्चर्य की बात है कि वे अमेरिका के पूरी तरह से जाने से पहले ही सड़कों पर आ गए, जबकि उन्होंने अफगानिस्तान पर साम्राज्यवादी कब्जे के दौरान होने वाले अमेरिकी अत्याचारों पर चुप्पी साध रखी थी। इसके माध्यम से वे साम्राज्यवाद के अपराधों को नजरअंदाज करते हैं और साम्राज्यवादी कब्जे को मुक्ति के रूप में चित्रित करते हैं और अफगानिस्तान के लोगों के साम्राज्यवाद–विरोधी संघर्ष को बदनाम करते हैं। ऐसे लोग जानबूझकर अफगानिस्तान में महिलाओं और उत्पीड़ित अल्पसंख्यकों के बहादुराना संघर्षों के इतिहास को कमजोर करते हैं और साम्राज्यवादियों द्वारा कट्टरपंथी ताकतों को सहायता और समर्थन की भी उपेक्षा करते हैं। यह विवरण सोवियत सशस्त्र हस्तक्षेप से पहले की अवधि में महिलाओं और लोगों के संघर्षों से प्राप्त उपलब्धियों को भी छोड़ देती है। सोवियत कब्जे वाले बलों की वापसी के आठ साल बाद अमेरिका ने सैन्य कब्जे का नेतृत्व किया था। वे इस तथ्य को भी छोड़ देते हैं कि अफगानिस्तान के लोगों ने अपने संघर्ष के माध्यम से 1964 के संविधान के तहत कुछ लोकतांत्रिक अधिकारों के लिए मान्यता प्राप्त की थी और यह संघर्ष तरूता पलट के बाद सत्ता में आई दाउद सरकार के तहत आगे बढ़ता रहा। यह सोवियत सैन्य कब्जा था जिसने इस प्रक्रिया को रोक दिया और आंतरिक संघर्ष से ध्यान हटाकर विदेशी कब्जे के खिलाफ संघर्ष में स्थानांतरित कर दिया। इसके अलावा, सोवियत सैन्य कब्जे ने सामाजिक रूप से रूढ़िवादी समाज के भीतर प्रतिक्रियावादी तत्वों की मदद की। अमेरिकी सैन्य कब्जे ने इन ताकतों को आगे बढ़ाया यानी लोकतांत्रिक तत्वों का दमन और प्रतिक्रियावादी ताकतों को मजबूत करना। इसलिए, यह साम्राज्यवाद है जो मुख्य रूप से अफगानिस्तान में लोकतांत्रिक ताकतों के विकास को दबाने के लिए जिम्मेदार है। साम्राज्यवादी कब्जे को बेहतर बताना अफगानिस्तान में लोकतांत्रिक आंदोलन के इतिहास और हितों के विपरीत है।

अफगानिस्तान कई जातीय समूहों का देश है जिसमें कोई एक समूह बहुमत में नहीं है, यहां तक कि सबसे बड़ा समूह पश्तून भी बहुमत में नहीं है। अफगानिस्तान पर केंद्रीकृत नियंत्रण थोपने के प्रयास प्रतिरोध को जन्म देंगे।

भाकपा (माले)–न्यू डेमोक्रेसी अफगानिस्तान में तालिबान की जीत का इस्तेमाल कर भारत में मुसलमानों पर हमला करने के लिए आरएसएस–भाजपा और उनकी सरकार के प्रयासों की कड़ी निंदा करती है। आरएसएस–भाजपा सरकार अपने खुले तौर पर सांप्रदायिक व संविधान विरोधी नागरिकता संशोधन अधिनियम (सीएए) को सही ठहराने के लिए तालिबान की जीत का इस्तेमाल करने की भी कोशिश कर रही है। वे इसे न केवल अपने सांप्रदायिक फासीवादी मंसूबों के लिए इस्तेमाल करने की कोशिश कर रहे हैं बल्कि उनका साम्राज्यवाद समर्थक चरित्र भी खुले तौर पर सामने आ रहा है।

आर.एस.एस. के लोग जो भारत की जनता के उपनिवेश विरोधी स्वतंत्रता आंदोलन से दूर रहे, बल्कि जिन्होंने अपने ही देश में औपनिवेशिक सत्ता का समर्थन किया, उनसे दूसरे देशों में जनता के साम्राज्यवाद–विरोधी संघर्षों का समर्थन करने की उम्मीद नहीं की जा सकती। आर.एस.एस.–भाजपा सरकार ने तो अमेरिका द्वारा सैन्य वापसी के फैसले का अंत तक विरोध किया व अफगानिस्तान पर साम्राज्यवादी कब्जे के समर्थक रहे।

(भाकपा (माले)- न्यू डेमोक्रेसी की केंद्रीय समिति के प्रस्ताव का हिन्दी अनुवाद)

लखीमपुर खीरी में किसानों की हत्याओं की निंदा तथा काले कृषि कानूनों की वापसी की मांग

पोडू भूमि की रक्षा के लिए तेलंगाना के आदिवासी क्षेत्रों में सड़क जाम

5 अक्तूबर को किसान संगठनों के आवाह्न पर तेलंगाना के आदिवासी क्षेत्रों में 5 घंटे के लिए सड़क जाम किया गया। इस आवाह्न का अन्य जन संगठनों तथा कई राजनीतिक पार्टियों ने भी समर्थन किया था। सड़क जाम में सभी राष्ट्रीय व प्रांतीय राजमार्गों को अवरुद्ध किया गया। इस सड़क जाम का आवाह्न पोडु रायतु पोराटा कमेटी के बैनर तले किया गया था।

तेलंगाना के आदिवासी क्षेत्रों में सड़क जाम व्यापक रुप से सफल रहा। बहुत से स्थानों पर प्रदर्शनकारी लोग बड़ी संख्या में जमा हुए तथा राजमार्गों को रोका। प्रदर्शनकारी हाथों में बैनर तथा झंडे लिये हुए थे। क्रांतिकारी गीतों से पूरा माहौल संघर्षमय हो गया था।

किसान संगठनों ने इस सड़क जाम का आवाह्न पोडु जमीन की रक्षा के लिए किया था। राज्य की टी.आर.एस. सरकार पिछले कई वर्षों से आदिवासियों की पोडू भूमि पर हमले करती आ रही है। बहुत स्थानों पर खाइयां खोदी गई हैं तथा कुछ स्थानों पर आदिवासियों को उस जमीन से बेदखल किया गया है जिस पर वे पीढ़ियों से खेती करते आ रहे थे। विरोध करने पर बहुत से आदिवासियों पर पुलिस केस भी बनाये गयें हैं जिनमें आदिवासी महिलाएं भी शामिल हैं। इसके खिलाफ आदिवासियों में व्यापक रोष है।

2006 के फोरेस्ट राइट्स एक्ट के अनुसार पोडू भूमि तथा वन उत्पाद पर कानूनी अधिकार की मांग पर पर आंदोलन काफी समय से चल रहा है। हाल में 5 सितम्बर से 5 अक्तूबर तक सी.पी.आई. एम.एल–न्यू डेमोक्रेसी ने एक माह तक पोडू भूमि पर कानूनी अधिकार के लिए, पर्यावरण की सुरक्षा के नाम पर चलाये जा रहे हरितहरम कार्यक्रम के तहत पोडू भूमि पर फसल को नष्ट किये जाने तथा गांवों के किनारे खाइयां खोदे जाने के खिलाफ अभियान चलाया जिसमें ए.आई.के.एम.एस. भी शामिल हुआ। इसके पहले ए.आई.के.एम.एस. की अखिल भारतीय जनरल कांसिल ने अंतर्राष्ट्रीय आदिवासी दिवस पर प्रदर्शनों, पदयात्राओं तथा जन सभाओं का आवाह्न किया था। ये कार्यक्रम व्यापक रुप से सफल रहे थे। इनमें पोडू जमीन की रक्षा मुख्य मांग थी। इन कार्यक्रमों में आदिवासी क्षेत्रों के जिलों में पदयात्राएं की गईं तथा जन सभाएं की गईं जिनमें हजारों लोग शामिल हुए।

2014 में तेलंगाना अलग प्रांत के गठन के बाद के.सी.आर. के नेतृत्व में टी.आर.एस. सरकार सत्ता में आई। तब से किसी पोडू किसान को पट्टा प्रमाणपत्र नहीं दिया गया है। के.सी.आर. ने वायदा किया था कि प्रत्येक आदिवासी तथा दलित परिवार जिसके पास या तो जमीन नहीं है या कम जमीन है, को 3 एकड़ खेती की जमीन दी जाएगी परंतु किसी भी आदिवासी को सरकार से जमीन नहीं मिली। दूसरी ओर के.सी.आर. सरकार आदिवासियों को प्रताड़ित कर रही है, उन पर हमले कर रही है, उनकी फसलों को नष्ट कर रही है तथा हरितहरम के नाम पर आदिवासियों को जमीनों से बेदखल कर रही है। कुछ स्थानों पर तो आदिवासियों को उन पोडू जमीनों से भी बेदखल किया गया है जिनके लिए उनका पट्टा भी मिल चुका है। लोगों ने फसलों को तबाह किये जाने तथा जमीन से बेदखली का विरोध किया है। जनता के खिलाफ सैकड़ों केस थोप दिये गये हैं तथा दफा 307 के तहत मुकदमे भी सैकड़ों यहां तक कि हजारों किसानों के खिलाफ हर साल लादे गये हैं। जिन किसानों की फसलें नष्ट की गई हैं अथवा जिन्हें जमीन से बेदखल किया गया है उनमें से कुछ ने आत्महत्या का प्रयास भी किया है। पोडू जमीनों की हिफाजत करना तथा उन पर खेती जारी रखना पोडू किसानों के लिए जिंदगी और मौत का सवाल है।

खम्मम जिले के कोंजिराला मंडल में येलन्नानगर में 150 आदिवासी तथा पिछड़ी जातियों के परिवार रहते हैं जो पिछले लगभग तीन दशकों से खेती कर रहे हैं। यह जमीन राजस्व तथा वन विभाग के बीच विवादित है। 4 अगस्त प्रातः को वन विभाग के अधिकारियों ने वहां आकर कपास तथा अन्य फसलों को नष्ट करना शुरू कर दिया। लोगों ने जिनमें महिलाएं शामिल थीं इसका विरोध किया तो आधिकारियों ने उनकी पिटाई की। कम संख्या होने के कारण अधिकारी उस समय वापस जाने को बाध्य हुए पर अगले दिन पुलिस बल के साथ आये जब लोग तहसीलदार के सामने प्रदर्शन कर रहे थे। पुलिस ने 21 लोगों को गिरफ्तार किया जिनमें 19 महिलाएं थीं। इनमें वे तीन महिलाएं भी थीं जो 3 माह, 8 माह तथा एक वर्ष के बच्चों की माएं हैं। जेल में इन महिलाओं के साथ उचित व्यवहार नहीं किया गया। 12 अगस्त को जेल से

(शेष पृष्ठ 7 पर)

भाजपा सरकार का किसानों पर सुनियोजित हमला

(पृष्ठ 3 का शेष)

भाजपा को किसान आंदोलन में मुस्लिमों और जाट एकता पुनः स्थापित होने से भारी धक्का लगा है। यही नहीं पिछड़े और अन्य भूमिहीन जातियां जो खेतिहर या कृषि मजदूर हैं बड़ी संख्या में आंदोलन के साथ एकताबद्ध हो रही हैं, क्योंकि इन कृषि कानूनों के नुकसान उन्हें भी दिखाई दे रहे हैं। उनके पास जमीनें भले ही ना हों लेकिन खेती वे किसानों की करते हैं अथवा उनके खेतों में मजदूरी करके अपना जीवन यापन करते हैं। ऐसे में यदि किसानों की जमीनें जाएंगी तो भूमिहीन मजदूर या पट्टे पर खेती करने वाले किसानों के भी रोजगार प्रभावित होंगे और इस सवाल को पूर्वी उत्तर प्रदेश के अन्य जिलों के छोटे किसान व भूमिहीन मजदूर भी समझने लगे हैं।

किसान आंदोलन की शुरुआत से ही भाजपा के केंद्रीय मंत्री, मुख्यमंत्री, व राष्ट्रीय नेता उसे राष्ट्र विरोधी बताते हुए बलपूर्वक कुचलने और जनता के एक हिस्से को आंदोलनकारियों के खिलाफ भड़काने की कोशिश करते रहे हैं। 26 जनवरी 2021 की ट्रैक्टर परेड से पूर्व केंद्र सरकार की तरफ से कृषि मंत्री नरेंद्र सिंह तोमर और पीयूष गोयल ने किसान नेताओं से 11 दौर की वार्ता की जिसमें सरकार की मंशा स्पष्ट थी कि किसान थक जाएं और लौट जाएं ताकि वह आसानी से कारपोरेट को खेती सौंपने का एजेंडा लागू कर सके। लखीमपुर खीरी से बाहुबली सांसद व केंद्रीय गृह राज्य मंत्री अजय मिश्रा ने किसानों के हत्याकांड से कुछ दिन पूर्व एक कार्यक्रम में किसानों द्वारा काला झंडा दिखाये जाने के बाद अपने भाषण में कहा था "10 या 15 आदमी वहां बैठे हैं। अगर हम उधर जाते तो भागने के लिए रास्ता नहीं मिलता। हम आप को सुधार देंगे। 2 मिनट के अंदर, मैं केवल मंत्री नहीं हूं, सांसद विधायक नहीं हूं। सांसद बनने से पहले जो मेरे विषय में जानते हैं उनको यह भी मालूम होगा कि मैं किसी चुनौती से भागता नहीं हूं और जिस दिन मैंने उस चुनौती को स्वीकार करके काम शुरू कर दिया उस दिन लखीमपुर छोड़ना पड़ जाएगा यह याद रखना"। ज्ञात हो कि जब से किसान आंदोलन शुरू हुआ है भाजपा और संघ के लोगों की ग्रामीण क्षेत्रों में सक्रियता बढ़ी है। यही कारण है की हरियाणा और अब यूपी में किसानों से टकराव बढ़ा है।

बाहुबली मंत्री उस गृह मंत्रालय में है जहां केंद्रीय मंत्री अमित शाह स्वयं गुजरात के एक मामले में अदालत द्वारा राज्य से निष्कासित हो चुके हैं और हाई कोर्ट के जज लोया हत्या के मामले में संदेहास्पद रहे हैं। टोनी ने किसानों को धमकी देने के बाद यूपी के उपमुख्यमंत्री केशव मौर्या को एक कार्यक्रम में आमंत्रित किया लेकिन हजारों किसान मौर्या का विरोध करने हेलीपैड तक पहुंच गए। परिणाम स्वरूप उपमुख्यमंत्री का कार्यक्रम स्थगित हो गया। और फिर हेलीपैड से प्रदर्शन करके लौट रहे किसानों को सबक सिखाने के लिए मंत्री के बेटे आशीष मिश्रा के साथ भाजपा कार्यकर्ताओं की कई गाड़ियों ने किसानों पर पीछे से गाड़ी चढ़ा दी जिसमें 4 किसान व एक पत्रकार की कुचलने से मौत हो गयी। पुलिस की भूमिका इस हत्याकांड में पक्षपातपूर्ण रही है। मंत्री पुत्र को बचाने और गिरफ्तारी टालने की जद्दोजहद में वह लगी रही लेकिन देश भर में किसानों के आक्रोश को देखते हुए कथित पूछताछ के बाद हिरासत में लेना पड़ा।

ऐसा ही मामला हरियाणा के मुख्यमंत्री मनोहर लाल खट्टर का है, जिसमें उन्होंने युवा भाजपा कार्यकर्ताओं को संबोधित करते हुए कहा "हर जिले में अपने 500, 700 या 1000 किसानों या लोगों को खड़ा करो, उनको वालंटियर बनाओ। फिर जगह–जगह जैसे को तैसा करो। उठा लो लठ्ठ किसानों को तुम भी जवाब दो, देख लेंगे, जो 4 महीने जेल में रह जाओगे तो कुछ सीखोगे और बड़े नेता बन जाओगे"। इसके बाद ही भाजपा सांसद नवाब सैनी की गाड़ी ने अंबाला में एक किसान से कुचल कर गंभीर रूप से जख्मी कर दिया। आखिर मामला बढ़ता देख खट्टर ने माफी तो नहीं मांगी लेकिन अपना बयान वापस ले लिया और कहा कि वह समाज में किसी भी तरह का टकराव नहीं चाहते और उन्होंने आत्मरक्षा की दृष्टि से वह बयान दिया था।

लखीमपुर किसान नरसंहार को लेकर मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ ने एक टीवी कार्यक्रम में मंत्री पुत्र को क्लीन चिट देते हुए कहा कि केंद्रीय मंत्री टेनी के पुत्र का अभी तक उस मामले में हाथ होने का कोई भी साक्ष्य सामने नहीं आया है। योगी का यह बयान भाजपा के षड्यंत्र का खुलासा करता है। वहीं दूसरी ओर लखीमपुर मामले में मंत्री पुत्र आशीष मिश्रा की गिरफ्तारी एक सप्ताह तक टलने के बाद सुप्रीम कोर्ट ने भी सख्त रुख अपनाया और यूपी सरकार को फटकार लगाते हुए पूछा कि मामला जब 302 का है, तो गिरफ्तारी अब तक क्यों नहीं हुई ? चीफ जस्टिस एनवी रमना ने सरकारी वकील हरीश साल्वे से पूछा आखिर आप क्या संदेश देना चाहते हैं। 302 के मामले में पुलिस सामान्य तौर पर क्या करती है? सीधा गिरफ्तार ही करते हैं ना। अभियुक्त जो भी हो कानून को अपना काम करना चाहिए। हालांकि सर्वोच्च अदालत ने कठोर आदेश देने से बचने के लिए तारीख बढ़ा दी।

यहां यह भी गौरतलब है कि विदेशों में 1–2 लोगों की मौत होने या देश में सड़क दुर्घटनाओं पर भी ट्वीट कर दुख जताने वाले प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने किसान आंदोलन के दौरान 700 से अधिक किसानों की मौत और अब लखीमपुर कांड पर भी संवेदना का एक भी शब्द न बोलने पर लोगों को हैरत नहीं होनी चाहिए क्योंकि मोदी सरकार किसान आंदोलन को राष्ट्र विरोधी एजेंडा साबित करने में लगी है।

किसान आंदोलन की मंजिल भले ही दूर हो लेकिन वह पड़ाव दर पड़ाव आगे बढ़ता रहा है। तमाम विपरीत स्थितियों तथा बाधाओं के बावजूद वह देश भर में समर्थन पा रहा है। इसकी बड़ी वजह आंदोलन की व्यापकता और उसमें देश के विभिन्न तबकों की आकांक्षाओं का शामिल होना है। इसके अलावा आम लोग भी यह समझ गए हैं कि कृषि उत्पादन, खाद्य सुरक्षा, खाद्यान्न उपलब्धता और उनकी कीमतों के निर्धारण जैसे सवाल यदि बाजार के हवाले हो जाएंगे तो इसकी कीमत सब को चुकानी पड़ेगी। जनता देख रही है कि सरकारों ने पेट्रोल, डीजल और रसोई गैस की कीमतों के निर्धारण का अधिकार कारपोरेट कंपनियों को दे दिया है तो अब इन उत्पादों की कीमतें दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ रही हैं। इसी तरह आवश्यक वस्तुओं की कीमतों को भी बाजार के हवाले छोड़ दिया गया है, जिसके कारण महंगाई बेतहाशा बढ रही है। इसलिए गरीब, निम्न और मध्यम वर्ग के लोग यह समझ गये हैं कि तीन कृषि कानून सिर्फ किसान विरोधी नहीं बल्कि वह जन विरोधी भी हैं। ऐसे में किसान आंदोलन भविष्य के बड़े संघर्षों की संभावनाओं को भी अपने में समेटे हुए है।

देशव्यापी बिजली संकट: कौन जिम्मेदार, किसे फायदा

वी.के. पटोले

अक्टूबर 2021 के महीने में देश बिजली संकट का सामना कर रहा है, जिससे कई राज्यों में बिजली कटौती की जा रही है और कई ताप विद्युत संयंत्रों ने कोयले के स्टाक के गंभीर रूप से समाप्त होने की सूचना दी है, जहां केवल कुछ दिनों का ही कोयला भंडार में बचा है। केंद्र सरकार इस संकट के लिए मुख्य वजह बता रही है कि देश में आर्थिक गतिविधियों के पुनरुद्धार के कारण मांग में वृद्धि हुई है, मानसून की भारी वर्षा के कारण कोयला उत्पादन में कमी आई है और उच्च कीमतों के कारण आयात में कमी हुई है जैसे कारण कुछ हद तक सही हैं लेकिन यह सभी पहले से ही ज्ञात अथवा प्रत्याशित थे और केंद्र सरकार द्वारा कारण दिखाई जा रही आर्थिक गतिविधियों की वृद्धि के बावजूद उससे निपटने के लिए बहुत पहले कदम उठाए जा सकते थे।

कोरोना महामारी के खतरे के कम होने के बाद आर्थिक गतिविधियों के पुनः शुरू होने व अधिक विद्युत आपूर्ति की मांग स्पष्ट रूप से अपेक्षित थी। संक्रमण के घटते मामलों, बढ़ते टीकाकरण और लगभग 67 प्रतिशत सीरो पॉजिटिविटी दर से संभावित हर्ड इम्यूनिटी (सामूहिक प्रतिरक्षा) की शुरुआत हो गई है। कोयले के आयात में कमी भी अचानक नहीं आई है और एक साल से अधिक समय से यह प्रवृत्ति स्पष्ट थी। वैसे भी आयातित कोयला बिजली उत्पादन के लिए उपयोग किए जाने वाले कुल कोयले का 10 प्रतिशत से कम प्रयोग होता है और इसका 80 प्रतिशत से अधिक निजी क्षेत्र के बिजली संयंत्रों द्वारा उपयोग किया जाता है।

खुली कोयला खदानों में मानसून के दौरान आई बाढ़ के कारण कोयला उत्पादन और आपूर्ति में कमी प्रतिवर्ष होती है और बिजली संयंत्रों से मानसून से पहले हर साल कोयला भंडारण (स्टाक) बनाने की उम्मीद की जाती थी, लेकिन इस साल इसमें लापरवाही क्यों हुई ? बिजली और कोयला उत्पादन एवं उसके आपूर्ति पर पूर्ण नियंत्रण और निगरानी दोनों केंद्र सरकार के नियंत्रण में है। वर्तमान बिजली संकट स्पष्ट रूप से केंद्र सरकार की लापरवाही और कुप्रबंधन का परिणाम है। हालांकि राज्य सरकारों ने भी केंद्र की मोदी सरकार को कोयले की कमी के लिए पहले से चेतावनी नहीं दी और ना ही उनके द्वारा चलाए जा रहे बिजली संयंत्रों की ओर से और कोयले की मांग की गई।

दरअसल मोदी सरकार ने बिजली क्षेत्र और विशेष रूप से कोयला खनन के निजीकरण को सही ठहराने के लिए इस कृतिम संकट को खड़ा करने की कोशिश की है। हालांकि अब तक सार्वजनिक क्षेत्र की कंपनी कोल इंडिया लिमिटेड (सीआईएल) और एससीसीएल द्वारा कोयले की मांग को हमेशा पूरा किया गया है। सीआईएल से कच्चे कोयले का खनन 2010–11 में 430 मिलियन टन एमटी से बढ़कर 2018–19 में 607 मीट्रिक टन प्रतिवर्ष (औसतन 1.66 मीट्रिक टन प्रतिदिन) हो गया है। कोरोना महामारी वर्ष के दौरान 2019–20 में आर्थिक मंदी और बिजली संयंत्रों द्वारा कम कोयला उठाव के साथ खनन घटकर 521 मीट्रिक टन और 2020–21 में 573 मीट्रिक टन हो गया। अब बिजली संकट की स्थिति में बढ़ी हुई मांग के मद्देनजर इसने कोयला आपूर्ति को 25 प्रतिशत से बढ़ाकर 2 एमटी प्रतिदिन कर दिया है। यह सब नये कोयला ब्लॉकों तक पहुंच की अनुमति नहीं होने और सरकार द्वारा खदान विकास के लिए धन कम किये जाने के बावजूद हुआ है। वित्त वर्ष 2020–21 में सरकार ने कोल इंडिया से करों के अलावा लाभांश के रूप में 1400 करोड़ रुपए से अधिक की राशि ली है और कंपनी को उर्वरक कंपनियों में अपने धन का निवेश करने के लिए मजबूर कर रहा है।

इसी तरह सार्वजनिक क्षेत्र के बिजली उत्पादकों को संकट से निपटने के लिए और अधिक बिजली प्रदान करने के लिए कहा जा रहा है। हालांकि कुल स्थापित बिजली उत्पादन (सभी रूपों) क्षमता का 48 प्रतिशत निजी क्षेत्र में है और 36 प्रतिशत कोयला आधारित बिजली उत्पादन क्षमता निजी क्षेत्र में है। सार्वजनिक क्षेत्र में थर्मल पावर प्लांटों में अगस्त 2020 की तुलना में अगस्त 2021 में अपने पीएलएफ (प्लांट लोड फैक्टर जो वास्तव में स्थापित उत्पादन क्षमता के प्रतिशत के रूप में उत्पन्न बिजली को दर्शाता है) में काफी वृद्धि हुई है। केंद्र सरकार के स्वामित्व वाले संयंत्रों में यह वृद्धि 61.9 प्रतिशत से 69.45 प्रतिशत तक और राज्य सरकारों के संयंत्रों में यह वृद्धि 44.1 प्रतिशत से 54.38 प्रतिशत तक हुई है। दूसरी ओर निजी क्षेत्र के संयंत्रों का पीएलएफ 53.03 प्रतिशत से मामूली रूप से बढ़कर 54.57 प्रतिशत हो गया है जबकि उनकी कैपटिव खदानें अधिक कोयले का उत्पादन नहीं कर रही हैं ?

हालांकि यह सभी तथ्य मोदी सरकार के लिए अप्रासंगिक हैं क्योंकि यह अपने पूर्ववर्ती सरकार की निजीकरण की नीतियों को और भी अधिक दृढ़ संकल्प और गति के साथ आगे बढ़ा रही है ताकि कोयला खनन और बिजली क्षेत्र को कारपोरेट द्वारा शोषण के लिए पूरी तरह से खोला जा सके। सरकार के दिन प्रतिदिन के खर्चों के लिए धन जुटाने का रास्ता राष्ट्रीय संपत्ति बेचना है जो अब मोदी सरकार की एक स्थापित नीति (संपत्ति का मुद्रीकरण) हो गया है। सरकार को कोयला ब्लॉकों की पिछली नीलामी में वांछित रूप से कम सफलता मिली थी। अब फिर से लगभग 88 खदानें वाणिज्यिक खनन के प्रावधान के तहत नीलामी के लिए रखी जा रही हैं। बाजार में कोयले की मुक्त बिक्री के लिए 100 प्रतिशत एफडीआई की भी अनुमति दे दी गई है। सरकार को उम्मीद है कि मौजूदा संकट और कोयले की कमी के प्रचार से अधिक बोली लगाने वालों को नीलामी में शामिल होने के लिए प्रेरित किया जाएगा। हालांकि प्रारंभिक अवधि में कोयला ब्लॉकों की नीलामी केवल कैपटिव खनन के लिए होती थी और बाजार में बिक्री नहीं होती थी। अब इन खदानों के मालिकों को भी मुनाफे की लूट का हिस्सा देने के लिए उन्हें अपने खनन कोयले का 50 प्रतिशत वाणिज्यिक रूप से बाजार में बेचने की अनुमति दी गई है ?

सार्वजनिक क्षेत्र की दिग्गज कंपनियों कोल इंडिया और एनटीपीसी के निजीकरण की प्रक्रिया पहले से ही धीरे–धीरे चल रहीं है। कोल इंडिया में शेयरों का विनिवेश अब तक 11 प्रतिशत है जबकि एनटीपीसी में विनिवेश 34 प्रतिशत पहुंच गया है। इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि अधिकांश उत्पादन निजी ठेकेदारों और उत्पादन कार्य आउटसोर्सिंग के माध्यम से किया जा रहा है। नतीजतन 50 से 90 प्रतिशत कर्मचारी पीएसयू के प्रत्यक्ष कर्मचारी नहीं हैं और उन्हें स्थाई श्रमिकों द्वारा प्राप्त कई लाभ नहीं मिलते हैं। नियमित श्रमिक कार्यबल के छोटे और छोटे विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग के रूप में लगातार घटते जा रहे हैं। सरकार द्वारा निर्धारित न्यूनतम मजदूरी अनुबंधों, आऊटसोर्सिंग श्रमिकों के लिए स्थाई श्रमिकों के वेतन का अधिकतम लगभग एक तिहाई है। ये श्रमिक छुट्टी, चिकित्सा सुविधाओं, आवास, वार्षिक वेतन वृद्धि आदि जैसे अन्य लाभों से वंचित हैं। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि पूरी तरह से निजी खदानों और बिजली संयंत्रों के ठेका श्रमिकों की तुलना में सरकार के एक प्रमुख नियोक्ता होने के कारण उनके लिए कुछ श्रम कानून लागू होते हैं और अब तक उनके शोषण पर कुछ सीमाएं रखी गई हैं, जबकि निजी खदानों व बिजली संयंत्रों के ठेका श्रमिकों के लिए कोई नियम नहीं हैं। हालांकि अगर नए श्रम कोड जो प्रमुख नियोक्ता को कई जिम्मेदारियों और देनदारियों से मुक्त करते हैं को लागू किया जाता है तो उनकी स्थिति और खराब हो जाएगी।

सुधारवादी और प्रतिक्रियावादी ट्रेड यूनियन इन उद्योगों में प्रमुख ताकतें हैं और सरकार द्वारा श्रमिकों के प्रतिनिधि के रूप में मान्यता प्राप्त हैं। ये यूनियनें ठेका श्रमिकों को संगठित करने में बहुत कम रुचि दिखाती हैं। कोयला उद्योग में प्रति 5 वर्ष में होने वाले वेतन समझौते में ठेका मजदूरों की ओर से मांगे रखी जाती हैं लेकिन उन मांगों पर गंभीरता से ध्यान नहीं दिया जाता। लगभग 8 वर्ष पहले एक उच्चाधिकार समिति (एचपीसी) द्वारा ठेका श्रमिकों के वेतन को स्थाई श्रमिकों के न्यूनतम वेतन के लगभग 60 से 70 प्रतिशत पर जोड़ने का फार्मूला लागू नहीं किया गया है। ध्यान देने योग्य है कि इन यूनियनों द्वारा जिन्होंने इस फार्मूले को तैयार किया था कोई कार्यवाही नहीं की जा रही है।

निजीकरण के आगे बढ़ने से ठेका आउटसोर्सिंग श्रमिकों का शोषण और बढ़ेगा और उन्हें संघर्ष की भी आवश्यकता होगी। वह कई ठेकेदारों के अधीन बिखरे हुए हैं लेकिन इन उद्योगों में उनकी कुल संख्या बहुत बड़ी है। क्रांतिकारी ट्रेड यूनियनों को इस अहम और बड़े मुद्दे को उठाना चाहिए और उनका समाधान करने के लिए उन्हें संगठित करने और संघर्ष का नेतृत्व करने के लिए सभी प्रयास करने चाहिए। इन श्रमिकों को संगठित करने और उनके संघर्षों का नेतृत्व करने के प्रश्न को विशेष रूप से ऐसे माहौल में संबोधित किया जाना चाहिए, जहां इन श्रमिकों की नौकरी की सुरक्षा जो कि किसी भी तरह से सुरक्षित नहीं है बचाव करना एक महत्वपूर्ण सवाल है।

पोडू भूमि की रक्षा के लिए तेलंगाना के आदिवासी क्षेत्रों में सड़क जाम

(पृष्ठ 6 का शेष)

छूटने के बाद इन्होंने जेल के सामने प्रदर्शन किया। जन दबाव के कारण के.सी.आर. सरकार को 307 दफा वापस लेने को बाध्य होना पड़ा। संघर्ष के जरिये लोग अपनी फसल बचाने में सफल रहे।

संयुक्त सम्मेलन

पोडू भूमि के सवाल पर के.सी.आर. सरकार पर दबाव बनाने के लिए संयुक्त कार्यक्रम के लिए प्रयास किये गये। इस क्रम में एक संयुक्त सम्मेलन 13 सितम्बर को हैदराबाद में आयोजित किया गया। इस सम्मेलन में 400 से अधिक प्रतिनिधियों ने भाग लिया। इसमें सी.पी.आई.(एम–एल) –न्यू डेमोक्रेसी, का. चंद्रम के नेतृत्वाधीन सी.पी.आई.(एम–एल) –न्यू डेमोक्रेसी, सी.पी.एम., सी.पी.आई., टी.जे.एस., कांग्रेस, टी.डी.पी. तथा आदिवासी संगठनों के प्रतिनिधि शामिल थे। इस सम्मेलन में किसान संगठनों के संयुक्त किसान मोर्चे द्वारा आहूत 27 सितम्बर के भारत बंद को लागू करने का फैसला लिया गया। सम्मेलन ने तीन काले कृषि कानूनों की वापस लेने तथा एम.एस.पी. के लिए कानून बनाने की भी मांग की। सम्मेलन ने 30 सितम्बर को जिला कलेक्टरों को ज्ञापन देने तथा 5 अक्तूबर को रास्ता रोकने तथा जनसभाएं करने का आवाहन किया। 30 सितम्बर को विभिन्न जिला मुख्यालयों पर सभाएं की गईं तथा ज्ञापन दिये गये।

5 अक्तूबर को तेलंगाना के आदिवासी बहुल जिलों में व्यापक रास्ता रोको हुआ। 65 केन्द्रों पर रास्ता रोका गया। आदिलाबाद से ऐश्वरावपेट, महबूबाबाद से हुजूरनगर तथा वनपर्ती से गडवाल के बीच रास्ता रोको में सी.पी.आई.(एम–एल) –न्यू डेमोक्रेसी ने काफी संख्या में भाग लिया। यह संख्या विभिन्न केन्द्रों पर 200 से लेकर 2500 के बीच रही। रास्ता रोको बेहद सफल रहा।

इस व्यापक जन विरोध के चलते तेलंगाना की के.सी.आर. सरकार को एक मंत्रीस्तरीय उप समिति बनाने तथा यह घोषणा करने को बाध्य होना पड़ा कि पोडू जमीन के मुद्दे तीन माह में सूलझा दिये जायेंगे। साथ ही सरकार ने पोडू भूमि किसानों से कानूनी अधिकार पाने के लिए पुनः आवेदन स्वीकार करने की भी घोषणा की। यह आंदोलन पोडू भूमि समस्या के हल होने तक विशेषकर खेती की जा रही पोडू जमीन पर कानूनी अधिकार मिलने तक जारी रहेगा।

इन क्षेत्रों में वन अधिकार कानून 2006 को लागू कराने तथा साथ ही आदिवासियों की भूमि के हस्तांतरण को रोकने के लिए 1/70 कानून को लागू कराने के सवाल अहम सवाल हैं जिन पर व्यापक गोलबंदी तथा तीव्र संघर्ष खड़ा किया जाना जरूरी है।

एयूकेयूएस (आस्टेलिया–ब्रिटेन–अमेरिका) : चीन के खिलाफ सैन्य गठबंधन की शुरुआत

अफगानिस्तान में पराजित होकर वहां से वापसी के बाद बिडेन प्रशासन ने अपना ध्यान भारत प्रशांत क्षेत्र में चीन के साथ बढ़ते टकराव पर केंद्रित कर दिया है। 15 सितंबर को ब्रिटेन और ऑस्ट्रेलिया के साथ अमेरिका ने सैन्य गठबंधन ''अउकुश'' की घोषणा की है जिसके तहत ऑस्ट्रेलिया को परमाणु ऊर्जा से चलने वाली पनडुब्बियां भी उपलब्ध कराई जाएंगी। नया सुरक्षा गठबंधन अमेरिकी प्रशासन की नीतियों के अनुरूप है। वैश्विक भूमिका के लिए चीन को अपना मुख्य विरोधी मानते हुए तीनों देशों के नेताओं ने इस रक्षा गठबंधन के चरित्र को छिपाया नहीं है। हालांकि चीन के नाम का उल्लेख ना करते हुए अमेरिकी राष्ट्रपति द्वारा यह लक्ष्य स्पष्ट किया गया है ''हम सभी लंबे समय तक हिंद प्रशांत क्षेत्र में शांति और स्थिरता सुनिश्चित करने की अनिवार्यता को पहचानते हैं''। साथ ही तीनों देशों के नेताओं ने जोर देकर कहा ''हमें सक्षम होने की आवश्यकता है। इस क्षेत्र में वर्तमान रणनीतिक वातावरण और कैसे विकसित हो सकता है जिससे हमारे प्रत्येक राष्ट्र का भविष्य और वास्तव में दुनिया में स्थायित्व हो और यह स्वतंत्र और खुले हिंद–प्रशांत क्षेत्र पर निर्भर करता है जिससे आने वाले दशकों में क्षेत्र फलता फूलता रहे''।

अफगानिस्तान से भागने के बाद से अमेरिकी उपराष्ट्रपति कमला हैरिस ने अमेरिका के साथ गठबंधन की विश्वसनीयता का आश्वासन देने के लिए दक्षिण पूर्व एशिया के देशों का दौरा किया था। चीन के साथ विवाद पर अपना ध्यान केंद्रित करने के साथ ही अमेरिका इस क्षेत्र में पूरा ध्यान देने की अपनी इच्छा का संकेत देना चाहता था। अफगानिस्तान में हार के तुरंत बाद इस सैन्य गठबंधन की घोषणा का एक महत्वपूर्ण मकसद ताइवान के प्रति अमेरिकी प्रतिबद्धता पर जोर देना है, जहां अमेरिकी समर्थक शासकों को आशंका है कि अमेरिकी प्रतिबद्धता की कमी मुख्य भूमि चीन के साथ घनिष्ठ संबंधों का समर्थन करने वाली ताकतों को प्रोत्साहित कर सकती है। ताइवान इस सैन्य समझौते का एक मुख्य पहलू है हांलाकि इसका व्यापक मकसद पूर्वी एशिया तथा दक्षिण पूर्व एशिया के देशों में प्रभाव को बढ़ाना है।

इस घोषणा में कई महत्वपूर्ण विशेषताएं हैं। सबसे पहले स्पष्ट रूप से दावा करता है कि अमेरिकी साम्राज्यवादी अभियान का फोकस इंडो–पैसिफिक है और यह चीन से चुनौती पर आधारित करता है। अपने चुनाव प्रचार के दौरान बिडेन ने कहा था कि वह रूस को मुख्य विरोधी मानते हैं जबकि ट्रंप ने चीन को मुख्य विरोधी बताया था। हालांकि हकीकत खुद–ब–खुद सामने आ गई है। जैसे ओबामा ने अन्य माध्यमों से बुश के वर्चस्ववादी अभियान को आगे बढ़ाने की कोशिश की थी बिडेन अंतरराष्ट्रीय संबंधों पर ट्रंप की लाइन का ही अनुसरण कर रहे हैं यह अलग बात है कि उनकी भाषा अलग है।

यह यूरोप के प्रति एक निश्चित बदलाव का प्रतीक है जो अब अंतर–साम्राज्यवादी अंतर्विरोधों का मुख्य केंद्र बिंदु नहीं है। रूस के अब प्रमुख विरोधी नहीं होने के कारण पश्चिमी यूरोपीय शक्तियों की उपयोगिता में गिरावट आई है। यहां भी ब्रिटेन को छोड़कर पश्चिमी यूरोप के साथ ट्रंप के डाउनग्रेडिंग संबंधों का अनुसरण बिडेन द्वारा किया जा रहा है ''अमेरिका वापस आ गया है'' की यूरोप में उनकी शोर के साथ घोषणा के बावजूद। इस प्रक्रिया में फ्रांस और ऑस्ट्रेलिया के बीच एक दर्जन डीजल संचालित पनडुब्बियों की आपूर्ति करने के लिए 90 बिलियन ऑस्ट्रेलियाई डॉलर का सौदा एक तरफ फेंक दिया गया है। इससे फ्रांस के नाटो सहयोगियों– अमेरिका और ब्रिटेन को कोई फर्क नहीं पड़ा है। फ्रांस ने फ्रांसीसी कंपनी नेवल ग्रुप के साथ सौदे को रद्द करने को सहयोगियों द्वारा ''विश्वासघात'' और ''पीठ में छुरा घोपना'' करार दिया है।

''अउकुश'' घोषणा इसलिए भी महत्वपूर्ण है क्योंकि क्वाड देशों– अमेरिका, ऑस्ट्रेलिया जापान और भारत के नेताओं की बैठक लगभग 1 सप्ताह के समय में वाशिंगटन में होने वाली है। क्वाड का उद्देश्य चीन का मुकाबला करना है जो चीन को नियंत्रित करने की अमेरिकी रणनीति का एक हिस्सा है। लेकिन क्वाड सदस्यों के बीच से सैन्य गठबंधन बनाने में हिचकिचाहट होती रही है और यह झिझक अफगानिस्तान से अमेरिका की वापसी के संदर्भ में और अधिक होने वाली है। इसलिए अमेरिका ने एंग्लोस्फीयर के अन्य दो देशों के साथ मिलकर यह कदम उठाया है। 5 एंगलोस्फेरिक देशों के खुफिया साझाकरण तंत्र के अन्य दो प्रतिभागी – कनाडा और न्यूजीलैंड – शायद सैन्य गठबंधन के लिए विशेष रूप से इसके परमाणु घटक के लिए तैयार नहीं थे। अब यह अन्य लोगों के लिए विशेष रुप से क्वाड सदस्यों के लिए चीन विरोधी गठबंधन के सैन्य विंग में शामिल होने के लिए खुला होगा। यह अभी तक एक पूर्ण सैन्य गठबंधन नहीं है, बल्कि यह एक ठोस कदम के साथ अमेरिकी साम्राज्यवाद की मंशा की घोषणा है।

अमेरिका ने इस गठबंधन में ब्रिटेन को शामिल किया है। इसे क्वाड प्लस–1 बनाने के इरादे से। कंजरवेटिव्स के तहत ब्रिटेन ब्रेक्सिट के बाद से अपने अलगाव को छुपाने के लिए आंशिक रूप से ''ग्लोबल ब्रिटेन'' की रणनीति पेश कर रहा है। ब्रिटेन ने हाल ही में उसने अपने विमानवाहक पोत महारानी एलिजाबेथ को दक्षिण चीन सागर भेजा था।

यह भी महत्वपूर्ण है कि यह घोषणा ताजिकिस्तान की राजधानी दुशांबे में एससीओ सम्मेलन की शुरुआत की पूर्व संध्या पर की गई है, जहां तालिबान के सत्ता में आने के बाद अफगानिस्तान की स्थिति मुख्य एजेंडा है। अमेरिकी साम्राज्यवाद एससीओ बैठक के महत्व से ध्यान भटकाने के लिए भी यह घोषणा करना चाहता था और रूस के साथ एससीओ का नेतृत्व करने वाले चीन को चुनौती देना चाहता था।

चीन ने इस पर कड़ी प्रतिक्रिया व्यक्त की है। उसके अमेरिका स्थित राजदूत ने इसे ''शीत युद्ध मानसिकता'' का प्रतिबिंब कहा है। वहीं एक चीनी अधिकारी ने इसे ''औपनिवेशिक युग में वापस जाने वाली गनबोट कूटनीति की गूंज'' बताया है। चीनी विदेश मंत्रालय के प्रवक्ता ने कहा अमेरिका ब्रिटेन और आस्ट्रेलिया के बीच परमाणु पनडुब्बी सहयोग में क्षेत्रीय शांति और स्थिरता को गंभीर रूप से कमजोर कर दिया है हथियारों की दौड़ तेज कर दी है और अंतरराष्ट्रीय परमाणु अप्रसार प्रयासों को कमजोर कर दिया है''।

चीन ने ऑस्ट्रेलिया को चेतावनी देने का फैसला किया है जिसके साथ उसके व्यापक व्यापारिक संबंध है। चीन ऑस्ट्रेलिया का सबसे बड़ा व्यापारिक साझेदार है। चीन के आधिकारिक पत्र ''ग्लोबल टाइम्स'' ने ऑस्ट्रेलिया को अमेरिका का पालतू कुत्ता कहा है और टिप्पणी की है कि ''ऑस्ट्रेलिया ने खुद को चीन का विरोधी बना लिया है''। उसने यह भी चेतावनी दी कि यदि ऑस्ट्रेलिया ''अमेरिका के प्रति अपनी निष्ठा दिखाने के लिए लिए आगे आता है और अमेरिका की चीन विरोधी रणनीति में सबसे प्रमुख स्थान लेता है, विशेष रूप से सैन्य रूप से मुखर होकर, तो कैनबरा बीजिंग के साथ प्रत्यक्ष विरोध के कारण लक्ष्य बन जाएगा, यह एक चेतावनी है''। इससे साफ है कि चीन इस क्षेत्र के देशों को उसके खिलाफ एकजुट करने के अमेरिकी प्रयासों से चिंतित है।

यह घोषणा परमाणु अप्रसार के प्रति असम्मान को भी दर्शाती है, जिसके बारे में अमेरिका और ब्रिटेन बहुत अधिक दावा करते रहे हैं। अमेरिका और ब्रिटेन दुनिया भर में देशों को परमाणु अप्रसार संधि पर कड़ाई से पालन करने की चेतावनी देते रहे हैं। परंतु अपने मित्र देश को खुद परमाणु शस्त्र उपलब्ध करा रहे हैं। आस्ट्रेलिया ने परमाणु अप्रसार संधि पर हस्ताक्षर किये हैं। आस्ट्रेलिया को परमाणु शक्ति से चलने वाली पनडुब्बियों को विकसित करने में मदद करने से उनके अधिग्रहण और संबंधित प्रौद्योगिकी के निर्यात को प्रभावी ढंग से वैध बनाया जा सकेगा। परमाणु हथियारों को खत्म करने के लिए अंतरराष्ट्रीय अभियान (आईसीएएन) ने कहा है कि ''एडिलेड में बनाया गया एक सैन्य परमाणु रिएक्टर हथियारों के विकास की दौड़ की दिशा में प्रवेश का एक कदम है''। परमाणु अप्रसार नियम को रौंदना न केवल इस बात की पुष्टि करता है कि इसका उपयोग पश्चिमी शक्तियों द्वारा केवल सरकारों को लक्षित करने के लिए किया गया है जो उन्हें पसंद नहीं है। पूर्व ऑस्ट्रेलियाई पीएम पॉल कीटिंग ने कहा है ''इस व्यवस्था से ऑस्ट्रेलियाई संप्रभुता का एक और नाटकीय नुकसान होगा''। आस्ट्रेलिया के मजदूर संगठनों ने इस समझौते का मुखर विरोध किया है। गोदी मजदूरों के संगठन ने सरकार द्वारा गुप्त सैन्य समझौते का विरोध किया है। यूनियन के अपसार इसका व्यापार पर प्रतिकूल पंभाव पड़ेगा तथा आस्ट्रेलिया आणविक हथियारों की दौड़ में शामिल होगा। आस्ट्रेलिया के इलैक्ट्रिक ट्रेड यूनियन ने भी समझौते को गद्दारी बताया है।

ब्रिटेन में जॉनसन की पूर्ववर्ती थेरेसा मे ने सवाल किया कि क्या यह सौदा ब्रिटेन को चीन के साथ युद्ध में घसीटने का कारण बन सकता है ? वास्तव में इस घोषणा का इन देशों के आंतरिक मामलों पर भी असर पड़ना निश्चित है। इन देशों के शासकों को जनता के तमाम सवालों पर प्रतिकूल प्रतिक्रियाओं का सामना करना पड़ रहा है– अराजक सैन्य वापसी के लिए बिडेन, कोविड कुप्रबंधन और ब्रेक्सिट के बाद से मंदी के लिए जॉनसन, ऑस्ट्रेलियाई पीएम स्कॉट मॉरीसन को आर्थिक समस्याओं पर घरेलू विरोध का सामना करना पड़ रहा है।

यह घोषणा उन लोगों के उत्साह को कुछ कम कर सकती है जिन्होंने 31 अगस्त को बिडेन के वक्तव्य में साम्राज्यवादी युद्धों की समाप्ति की घोषणा को महसूस किया था। जबकि ऐसा होने वाला नहीं है क्योंकि साम्राज्यवाद का मतलब ही युद्ध है। युद्ध को समाप्त करने के लिए साम्राज्यवाद को समाप्त करना होगा। साम्राज्यवाद स्वयं युद्ध समाप्त नहीं कर सकता। तथापि ह्रासोन्मुख साम्राज्यवादी महाशक्ति के पैंतरे खतरनाक और निराशाजनक दोनों ही हैं।

(सीपीआई (एमएल) न्यू डेमोक्रेसी की केन्द्रीय कमेटी द्वारा 16 सितंबर 2021 को जारी वक्तव्य का हिन्दी अनुवाद)

If Undelivered, Please Return to

Pratirodh Ka Swar

Monthly

Balmukand Khand,
Girinagar,
New Delhi-110019

Hindi Organ of CPI(ML)-New Democracy

R. N. 47287/87

Book Post

To

;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;
;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;
;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;
;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;
;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;
;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;

प्रकाशक, मुद्रक व स्वामी यतेन्द्र कुमार द्वारा स्टार ऑफसेट, टी.2151/8.ए.2, न्यू पटेल नगर, नई दिल्ली–110008 से मुद्रित व बालमुकन्द खण्ड, गिरी नगर, नई दिल्ली–110019 से प्रकाशित। सम्पादक : यतेन्द्र कुमार